नमाज़ के लिए जाने के आदाब

लेखक

इस्लाम-धर्म के महान ज्ञाता, प्रख्यात विद्वान, इस्लामी जागरण के ध्वजवाहक

शैख़ मुहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब

-रहिमहुल्लाह-

(नमाज़ के लिए जाने के आदाब)

लेखक : इस्लाम-धर्म के महान ज्ञाता, प्रख्यात विद्वान, इस्लामी जागरण के ध्वजावाहक शैख़ मुहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब -रहिमहुल्लाह-

इस किताब का संशोधन एवं अल-मकतबा अस-सऊदियह में क्रमांक 86/269 के तहत मौजूद इसकी एक हस्तलिखित प्रति एवं अन्य कई प्रकाशित प्रतियों से तुलनात्मक अध्ययन अब्दुल करीम बिन मुहम्मद अल-लाहि़म , नासिर बिन अब्दुल्लाह अत-तरीम और सुऊद बिन मुहम्मद अल-बिश्र ने किया है।

شركاء التنفيذ:

دار الإسلام
ISLAM HOUSE .com

جمعية الربوة

رواد الترجمة

المحتوى الإسلامي

يتاح طباعة هذا الإصدار ونشره بأي وسيلة مع الالتزام بالإشارة إلى المصدر وعدم التغيير في النص.

Telephone: +966114454900

ceo@rabwah.sa

P.O.BOX: 29465

RIYADH: 11557

www.islamhouse.com

अल्लाह के नाम से (शुरू करता हूँ), जो बड़ा दयालु एवं अति कृपाशील है।

(अध्याय: नमाज़ के लिए जाने के आदाब)

सुन्नत यह है कि आदमी नमाज़ के लिए वज़ू करके विनम्रता के साथ निकले, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का कथन है : "जब तुममें से कोई व्यक्ति अच्छी तरह से वुज़ू करे और फिर मस्जिद जाने के इरादे से निकले, तो वह हरगिज़ अपने एक हाथ की उँगलियों को दूसरे हाथ की उँगलियों के बीच न घुसाए, क्योंकि वह नमाज़ में है।" तथा जब वह अपने घर से निकले - चाहे नमाज़ के अलावा किसी अन्य काम के लिए ही क्यों न हो – तो यह दुआ पढ़े :

"بسم الله آمنت بالله، اعتصمت بالله، توكلت على الله ولا حول ولا قوة إلا بالله، اللهم إني أعوذ بك أن أضل أو أُضل أو أَزل أو أُزل أو أَظلم أو أُظلم أو أَجهل أو يُجهل علي"

(अल्लाह के नाम से, मैं अल्लाह पर ईमान लाया, मैंने अल्लाह को मज़बूती से पकड़ लिया और मैंने अल्लाह पर पूरा भरोसा कर लिया। अल्लाह के सामर्थ्य के बिना न कुछ करने की शक्ति है और न किसी चीज़ से बचने की ताक़त। ऐ अल्लाह! मैं तेरी शरण लेता हूँ इस बात से कि मैं गुमराह हो जाऊँ या गुमराह कर दिया जाऊँ, या फिसल जाऊँ या फिसला दिया जाऊँ, या किसी पर ज़ुल्म करूँ या मुझपर ज़ुल्म किया जाए, या मैं किसी के साथ

अज्ञानता का व्यवहार करूँ, यह मेरे साथ अज्ञानता का व्यवहार किया जाए।" मस्जिद की ओर शांति और गरंभीरता के साथ जाए। क्योंकि अल्लाह के रसूल - सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फरमान है : "जब तुम इक़ामत की आवाज़ सुनो, तो सुकून के साथ चल पड़ो, फिर जितनी नमाज़ मिले उसे पढ़ लो और जो छूट जाए उसे पूरी कर लो।" वह चलते हुए छोटे- छोटे डग भरे और यह दुआ पढ़े :

" اللهم إني أسألك بحق السائلين عليك وبحق ممشاي هذا فإني لم أخرج أشراً ولا بطراً ولا رياء ولا سمعة خرجت اتقاء سخطك وابتغاء مرضاتك أسألك أن تنقذني من النار وأن تغفر لي ذنوبي جميعاً إنه لا يغفر الذنوب إلا أنت"

(ऐ अल्लाह! मैं तुझसे माँगने वालों के तुझपर अधिकार और अपने इस चलने के अधिकार की दुहाई देकर माँगता हूँ। क्योंकि मैं घमंड, अहंकार, दिखावे और ख्याति की प्राप्ति के लिए नहीं निकला, मैं तो तेरे क्रोध से बचने और तेरी प्रसन्नता की खोज में निकला हूँ। मैं तुझसे विनती करता हूँ कि मुझे नरक से बचा ले और मेरे सभी पापों को माफ कर दे। क्योंकि पापों को केवल तू ही क्षमा कर सकता है।) साथ ही यह दुआ भी पढ़े :

" اللهم اجعل في قلبي نوراً وفي لساني نوراً واجعل في بصري نوراً وفي سمعي نوراً وأمامي نوراً وخلفي نوراً وعن يميني نوراً وعن شمالي نوراً وفوقي نوراً وتحتي نوراً اللهم أعطني نوراً "

(ऐ अल्लाह! मेरे दिल में प्रकाश डाल दे, मेरी ज़बान में प्रकाश डाल दे, मेरी दृष्टि में प्रकाश डाल दे, मेरे कानों में प्रकाश भर दे, मेरे आगे प्रकाश कर दे, मेरे पीछे प्रकाश कर दे, मेरे दाहिनी ओर प्रकाश कर दे, मेरे बायीं ओर प्रकाश कर दे, मेरे ऊपर प्रकाश कर दे और मेरे नीचे प्रकाश कर दे। ऐ अल्लाह! मुझे प्रकाश प्रदान कर दे।)

जब मस्जिद में प्रवेश करे, तो मुस्तहब यह है कि पहले अपने दाएँ पाँव को मस्जिद के अंदर रखे और यह दुआ पढ़े :

" بسم الله أعوذ بالله العظيم وبوجهه الكريم وسلطانه القديم من الشيطان الرجيم اللهم صل على محمد اللهم اغفر لي ذنوبي وافتح لي أبواب رحمتك"

(अल्लाह के नाम से, मैं महान अल्लाह एवं उसके पावन चेहरे और उसकी आदिम बादशाहत की, धुतकारे हुए शैतान से, शरण माँगता हूँ। ऐ अल्लाह! मुहम्मद -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- पर अपनी प्रशंसा की बारिश कर। ऐ अल्लाह! मेरे गुनाहों को माफ़ कर दे और मेरे लिए अपनी रहमत के दरवाज़े खोल दे।) और जब निकले तो अपना बायाँ पैर पहले

निकाले और यह दुआ पढ़े : "وافتح لي أبواب فضلك" (और मेरे लिए अपनी अनुकंपा के दरवाज़े खोल दे।) जब मस्जिद में प्रवेश करे, तो दो रक्अत नमाज़ पढ़े बिना न बैठे, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फरमान है : "जब तुममें से कोई मस्जिद में प्रवेश करे, तो दो रक्अत नमाज़ पढ़े बिना न बैठे।" फिर अल्लाह के ज़िक्र में व्यस्त हो जाए या चुपचाप बैठा रहे, सांसारिक बातचीत में लिप्त न हो। वह जब तक ऐसी अवस्था में रहेगा, तब तक नमाज़ ही में रहेगा और फ़रिश्ते उसके लिए अल्लाह से क्षमादान की प्रार्थना करते रहेंगे। ऐसा उस वक्त तक होता रहेगा, जब तक कि वह किसी को कष्ट न दे या उसका वुज़ू न टूट जाए।

(अध्याय : नमाज़ का तरीक़ा)

मुस्तहब यह है कि अगर इमाम मस्जिद में मौजूद हो, तो मुअज़्ज़िन के "قد قامت الصلاة" कहने के समय नमाज़ के लिए खड़ा हो, अन्यथा जब उसे देखे, तब खड़ा हो। इमाम अहमद से पूछा गया कि क्या आप तकबीर कहे जाने से पहले कोई दुआ पढ़ते हैं? उन्होंने जवाब दिया कि नहीं, क्योंकि ऐसी कोई दुआ न अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- से प्रमाणित है और न ही आपके किसी सहाबी से। उसके बाद इमाम, कंधों से कंधे और टख़नों से टख़ने मिलवा कर पंक्तियों को सीधा करवाएगा।

सबसे पहले पहली पंक्ति को फिर उसके बाद वाली को पूरा करना, इमाम के पीछे नमाज़ अदा करने वालों (मुक़्तदीगण) का आपस में पंक्तिबद्ध होकर खड़ा होना और पंक्ति के अंदर की खाली जगहों को भरना सुन्नत है। ध्यान रहे कि हर पंक्ति का दाहिना हिस्सा अधिक उत्तम है, तथा सर्वश्रेष्ठ लोगों को इमाम के निकट खड़ा होना चाहिए, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम - ने फरमाया है : "तुममें से मेरे निकट परिपक्व और बुद्धिमान लोग खड़े हों।" पुरुषों की सबसे उत्तम पंक्ति, सबसे पहली पंक्ति और सबसे बुरी पंक्ति सबसे अंतिम पंक्ति है। जबकि महिलाओं की सबसे उत्तम पंक्ति, सबसे अंतिम पंक्ति तथा सबसे बुरी पंक्ति सबसे पहली पंक्ति है। फिर जिसके पास खड़े होने की शक्ति हो, वह खड़े होकर "الله اكبر" कहेगा। इसके बदले में दूसरा शब्द कहना उसके लिए पर्याप्त नहीं है। इससे नमाज़ शुरू करने की हिकमत उस अस्तित्व की महानता को याद करना है जिसके सामने

वह खड़ा है, इसलिए वह पूरी तरह विनम्र हो जाता है। अगर वह शब्द "الله" या "أكبر" के हमज़ा को खींच कर पढ़ता है, या "إكبار" बोल देता है, तो उसकी तकबीर (तहरीमा) मान्य नहीं होगी। गूँगा व्यक्ति अपने दिल में तकबीर-ए-तहरीमा कहेगा, अपनी ज़बान को नही हरकत देगा। यही क़िराअत (क़ुरआन पढ़ने) और तसबीह आदि पढ़ने का भी हुक्म है।

इमाम का ऊंचे स्वर से तकबीर पढ़ना सुन्नत है, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने फरमाया है : "जब इमाम तकबीर कहे, तो तुम भी तकबीर कहो।" और इमाम का "سمع الله لمن حمده" भी ऊंचे स्वर से कहना सुन्नत है, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने फरमाया है : "और जब इमाम "سمع الله لمن حمده" कहे, तो तुम लोग "ربنا و لك الحمد" कहो।"

इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने वाला (मुक़तदी) और अकेले नमाज़ पढ़ने वाला धीमे स्वर से तकबीर कहेगा और अगर कोई मजबूरी न हो, तो अपने दोनों हाथों को इस प्रकार अपने मोंढों के सीध तक उठाएगा कि उँगलियाँ बिल्कुल सीधी और आपस में मिली हुई हों और दोनों हथेलियों के अंदरूनी हिस्से क़िबले की ओर हों। दोनों हाथों को ऊपर उठाना, इस तरफ इशारा है कि नमाज़ी और उसके रब के बीच पर्दा उठ गया, जैसे तर्जनी से इशारा इस बात की अलामत है कि अल्लाह एक है। उसके बाद, अपनी दाहिनी हथेली से बायीं कलाई को पकड़ लेगा और फिर उसे नाभि के नीचे रख लेगा। जिसका अर्थ

अपने सर्वशक्तिमान पालनहार के सामने विनम्रता है। उसके लिए मुस्तहब (वांछनीय) यह है कि वह नमाज़ की सभी स्थितियों में अपने सजदे की जगह को देखे, सिवाय तशह्हुद के, जिसमें वह अपनी तर्जनी को देखेगा। फिर वह गुप्त रूप से दुआ-ए-इस्तिफ़ताह पढ़ेगा। वह कहेगा : "سبحانك اللهم وبحمدك"। यहाँ "سبحانك اللهم" का अर्थ है : ऐ अल्लाह! मैं तुझे तेरी शान के अनुसार, हर अवगुण से पाक मानता हूँ। "وبحمدك " का मतलब है : मैं तेरा गुणगान और प्रशंसा एक साथ करता हूँ। "وتبارك اسمك" का मतलब है : तुझे याद करने से ही बरकत की प्राप्ति होती है। "وتعالى جدك" का मतलब है : तेरी शान बहुत ऊँची है। "ولا إله غيرك" का अर्थ है : ऐ अल्लाह! तेरे सिवा कोई सत्य पूज्य न धरती पर है और न ही आकाश में। इसके अलावा, हर उस दुआ के साथ भी नमाज़ शुरू करना जायज़ है, जो हदीस में आई है। फिर वह गुप्त रूप से शरण मांगेगा, चनाँचे वह : "أعوذ بالله من الشيطان الرجيم" कहेगा। वैसे शैतान से पनाह माँगने के जो भी शब्द आए हुए हैं, उनमें से किसी को भी पढ़ना सही माना जाएगा। फिर वह गुप्त रूप से "بسم الله الرحمن الرحيم" पढ़ेगा। ज्ञात

रहे कि "بسم الله الرحمن الرحيم", न तो सूरत फ़ातिहा का अंश है और न ही किसी दूसरी सूरत का। हाँ, यह सूरत फ़ातिहा से पहले और प्रत्येक दो सूरतों के बीच एक आयत के रूप में आया है। लेकिन सूरत अनफ़ाल तथा सूरत बराअत के बीच में इसका प्रयोग नहीं हुआ है। किताबों की शुरूआत में उसे लिखना सुन्नत है, जैसा कि सुलैमान -अलैहिस्सलाम- ने लिखा था और स्वयं अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- अपने हर पत्र के शुरू में लिखवाया करते थे। इसे हर काम को शुरू करने से पहले भी पढ़ा जाना चाहिए, क्योंकि इससे शैतान दूर भाग जाता है। इमाम अहमद ने कहा है कि उसे कविता के छंद के सामने या उसके साथ नहीं लिखा जाना चाहिए। फिर सूरत फ़ातिहा, आयतों के क्रमानुसार, लगातार और साफ-साफ पढ़ेगा, जो इस हदीस के अनुसार नमाज़ की हर रकअत का रुक्न (अभिन्न अंग) है : "उस व्यक्ति की नमाज़ नहीं, जिसने सूरत फ़ातिहा नहीं पढ़ी।" इस सूरत को उम्मुल-क़ुरआन (क़ुरआन की माँ) का नाम भी दिया गया है, क्योंकि इसमें इलाहियात (अल्लाह के अस्तित्व एवं गुणों (दैवीय चीज़ों), आख़िरत, नुबुव्वतों (ईशदूतत्व) के साथ-साथ तक़दीर के प्रमाण का भी ज़िक्र है। इसकी आरंभिक दो आयतों में अल्लाह के अस्तित्व और गुणों का ज़िक्र है, तो {مالك يوم الدين} से दोबारा जीवित होकर उठने का सबूत मिलता है। जबकि {إياك نعبد وإياك نستعين} (ऐ अल्लाह! हम केवल तुझ ही को पूजते हैं और केवल तुझ ही से सहायता मांगते

हैं।) आदेश, निषेध और भरोसा और इन सारी चीज़ों को केवल अल्लाह के लिए समर्पित करने को दर्शाता है। इस सूरत में सत्य के मार्ग और उसपर चलने वालों और अनुकरणीय लोगों को चिह्नित करने के साथ-साथ गुमराही के रास्ते से भी सावधान कर दिया गया है।

अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- की पठनशैली का ध्यान रखते हुए, उसकी हर आयत पर ठहरना मुस्तहब है। यह क़ुरआन की सबसे महान सूरत है, जबकि क़ुरआन की सबसे महान आयत आयतुल-कुर्सी है। इसमें ग्यारह तश्दीदें (एक चिह्न जो यह बताता है कि इस शब्द को दो बार पढ़ना है।) हैं। तशदीद एवं मद्द (एक मात्रा चिह्न) के उच्चारण के समय उनको ज़रुरत से ज़्यादा बढ़ाना अप्रिय है। इस सूरत को पढ़कर ख़त्म करने पर एक हल्के विराम के बाद 'आमीन' कहना चाहिए, ताकि मालूम हो जाए कि यह शब्द क़ुरआन का अंश नहीं है। 'आमीन' का अर्थ है : ऐ अल्लाह! तू क़बूल कर ले। इमाम और मुक़तदी दोनों को जहरी नमाज़ों (जिनमें क़ुरआन को ऊँची आवाज़ में पढ़ना होता है) में इस शब्द का ऊँची आवाज़ में उच्चारण करना चाहिए। है। समुरह - रज़ियल्लाहु अन्हु - से वर्णित हदीस पर अमल करते हुए, इमाम का उसको पढ़ने के बाद थोड़ी देर चुप रहना मुस्तहब है। याद रहे कि अनपढ़ व्यक्ति के लिए उसको सीखना अनिवार्य है, क्योंकि अगर क्षमता रखने के बावजूद वह इसे नहीं सीखता है, तो उसकी नमाज़ सही नहीं होगी। हाँ, अगर कोई व्यक्ति उसका कोई अंश या क़ुरआन की किसी दूसरी सूरत का कोई अंश सटीक ढंग से नहीं पढ़ पाता है, तो उसपर लाज़िम है कि वह :

(سبحان الله و الحمد لله و لا إله إلا الله و الله أكبر) पढ़े; क्योंकि आप - सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम - ने फरमाया है : "अगर तुम्हें क़ुरआन में से कुछ याद है, तो उसे पढ़ो और अगर नहीं याद है, तो फिर “अल-हम्दु-लिल्लाह, ला इलाहा इल्लल्लाह और अल्लाहु अकबर” कहो और फिर रुकू करो।" इस हदीस को अबू दाऊद और तिरमिज़ी ने रिवायत किया है। फिर वह गुप्त रूप से बिस्मिल्लाह पढ़े और फिर कोई पूरी सूरत पढ़े। एक आयत पढ़ना भी काफ़ी है, मगर इमाम अहमद ने इस बात को मुस्तहब करार दिया है कि अगर केवल एक ही आयत पढ़नी हो, तो लंबी आयत होनी चाहिए। यदि कोई व्यक्ति नमाज़ में न हो, तो यदि वह चाहे तो बिस्मिल्लाह को ऊँची आवाज़ में पढ़े और चाहे तो गुप्त रूप से पढ़े। फ़ज्र की नमाज़ में तिवाल-ए- मुफ़स्सल (मुफ़स्सल भाग की बड़ी सूरतों) से पढ़ना चाहिए, जिसका आरंभ सूरत क़ाफ़ से होता है। औस -रहिमहुल्लाह- कहते हैं कि मैंने मुहम्मद -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- के सहाबियों से पूछा कि आप लोग क़ुरआन को कैसे विभाजित करते हैं? तो उन्होंने उत्तर दिया : "पहले दिन तीन सूरत, दूसरे दिन पाँच सूरत, तीसरे दिन सात सूरत, चौथे दिन नौ सूरत, पाँचवे दिन ग्यारह सूरत, छठे दिन तेरह सूरत और सातवें दिन उसका मुफ़स्सल भाग।" अगर कोई उज़्र जैसे सफ़र और बीमारी आदि न हो, तो फ़ज्र की नमाज़ में क़िसार-ए-मुफ़स्सल (मुफ़स्सल भाग की छोटी सूरतों) से पढ़ना मकरूह (नापसंदीदा) है। मग़्रिब की नमाज़ में अकसर क़िसार-ए-मुफ़स्सल की सूरतें और कभी-कभी लंबी सूरतें भी पढ़नी चाहिए। क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- से मग़्रिब की नमाज़ में सूरतुल-आराफ़ का पढ़ना भी साबित है। शेष

नमाज़ों में अगर कोई उज़्र न हो, तो औसात-ए-मुफ़स्सल (मुफ़स्सल भाग की मद्धयम सूरतों) से पढ़ना चाहिए, अन्यथा छोटी सूरतें भी पढ़ सकता है। अगर कोई अजनबी नहीं सुन रहा हो, तो औरत के जहरी नमाज़ों में ऊँची आवाज़ में क़ुरआन का पाठ करने में कोई हर्ज नहीं है। जबकि रात को नफ़्ल नमाज़ पढ़ने वाले को चाहिए कि दूसरों के हित का ख़्याल रखे, अर्थात् अगर उसके समीप कोई ऐसा व्यक्ति हो जो उसके ऊँची आवाज़ में क़ुरआन पढ़ने से कष्ट महसूस करता हो, तो आहिस्ता पढ़ेगा और अगर ऐसा हो कि वह उसका क़ुरआन पाठ करना, सुनने का इच्छुक हो, तो ऊँची आवाज़ में पढ़ेगा। अगर ऊँची आवाज़ में क़ुरआन पढ़े जाने वाली नमाज़ में आहिस्ता पढ़ने लगे, या फिर इसी तरह आहिस्ता क़ुरआन पाठ किए जाने वाली नमाज़ में ज़ोर से पढ़ने लगे और बाद में याद आ जाए, तो जितना पढ़ चुका है, उसे वैध मानते हुए आगे सुन्नत के अनुसार पढ़ेगा। आयतों की तरतीब (क्रम) का लिहाज़ करना अनिवार्य है, क्योंकि इसका आधार नस (क़ुरआन एवं हदीस के पाठ) है, जबकि सूरतों की तरतीब (क्रम) का आधार अधिकांश विद्वानों के अनुसार नस नहीं, बल्कि इजतिहाद है।

इसलिए, उनकी तरतीब को भंग करके पढ़ना भी जायज़ है। यही कारण है कि विभिन्न सहाबियों के मुसहफों में सूरतों की तरतीब में थोड़ा बहुत अंतर पाया जाता था। इमाम अहमद ने हमज़ा और किसाई की पठन-शैली और अबू अम्र के लंबे इदग़ाम को नापसंद किया है। फिर क़ुरआन की तिलावत पूरी करने और क्षण भर ठहरने के बाद, ताकि साँस अपनी जगह लौट आए, दोनों हाथों

को पहले की तरह उठाएगा और अपनी तिलावत को रुकू की तकबीर से नहीं मिलाएगा। फिर तकबीर कहकर, अपने दोनों हाथों को, उंगलियों को फैलाए हुए अपने दोनों घुटनों पर रखेगा और घुटनों को मज़बूती से पकड़ लेगा, पीठ को सीधा रखेगा और सिर को पीठ की सीध में रखेगा, न उससे ऊँचा होने देगा और न ही नीचा होने देगा, जैसा कि आयशा -रज़ियल्लाहु अन्हा- की हदीस बताती है। दोनों कोहनियों को पहलुओं से अलग रखेगा, जैसा कि अबू हुमैद -रज़ियल्लाहु अन्हु- की हीदस से मालूम होता है। रुकू में " سبحان ربي العظيم" पढ़ेगा, जैसा कि सहीह मुस्लिम में हुज़ैफ़ा -रज़ियल्लाहु अन्हु- से वर्णित है। रुकू की तसबीह की निम्नतम पूर्ण संख्या तीन बार है और इमाम के लिए अधिकतम संख्या दस बार है। यही हुक्म सजदों में "سبحان ربي الأعلى" पढ़ने की संख्या का भी है। रुकू और सजदों में क़ुरआन की कोई सूरत या आयत नहीं पढ़ेगा, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने इससे मना किया है। फिर अपना सिर उठाएगा, साथ ही चाहे इमाम हो या अकेले नमाज़ पढ़ रहा हो, अनिवार्य रूप से "سمع الله لمن حمده" कहते हुए, अपने हाथों को भी उठाएगा जैसा कि पहले उठाया था। यहाँ "سمع" का अर्थ है : क़बूल कर लिया। फिर जब सीधा खड़ा हो जाए, तो यह दुआ पढ़ेगा :

"ربنا ولك الحمد ملء السموات والأرض وملء ما شئت من شيء بعد "

(ऐ हमारे पालनहार! तेरे ही लिए सारे आसमानों और ज़मीन भर और इनके बाद जो तू चाहे उसके भर प्रशंसाएं हैं।) और अगर चाहे तो यह शब्द बढ़ा ले :

" أهل الثناء والمجد، أحق ما قال العبد، وكلنا لك عبد، لا مانع لما أعطيت، ولا معطي لما منعت، ولا ينفع ذا الجد منك الجد "

(ऐ प्रशंसा तथा प्रतिष्ठा के योग्य, सबसे सच्ची बात जो बंदे ने कही – और हम सब तेरे ही बंदे हैं – (वह यह है) जो कुछ तू दे उसे कोई रोक नहीं सकता और जो तू रोक ले उसे कोई दे नहीं सकता तथा किसी को उसकी दौलत और शान, तेरे सामने लाभ नहीं पहुँचा सकती।) चाहे तो इसके सिवा अन्य कोई भी साबित दुआ पढ़ सकता है। और अगर चाहे तो "اللهم ربنا لك الحمد", बिना و (वाव) के भी पढ़ सकता है, क्योंकि अबू सईद -रज़ियल्लाहु अन्हु- आदि से वर्णित हदीस में इस तरह भी आया है। यदि मुक़तदी (इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने वाला) इमाम को इस रुकू में पा ले, तो उसने पूरी रक्अत पा ली। फिर वह तकबीर कहेगा और सजदे में चला जाएगा। सजदे में जाते हुए दोनों हाथों को नहीं उठाएगा। पहले घुटनों को ज़मीन पर रखेगा, फिर अपने दोनों हाथों को और फिर अपने चेहरे को रखेगा। अपनी पेशानी, नाक और दोनों हथेलियों को ज़मीन पर टिका देगा। सजदे की हालत में, अपने पैरों की उंगलियों के किनारों का रुख

क़िबले की ओर रखेगा। इन सात अंगों पर सजदा करना, नमाज़ का एक रुक्न है। मुस्तहब यह है कि आदमी इस अवस्था में अपनी दोनों हथेलियों के भीतरी भाग को ज़मीन पर इस तरह रखे कि उँगलियाँ आपस में मिली हुई क़िबले की दिशा में हों, बंधी हुई न हों तथा कोहनियों को उठाए रखे।

ऐसी जगह पर नमाज़ पढ़ना मकरूह है, जो अत्यधिक गर्म या अत्यधिक ठंडी हो, क्योंकि ऐसी जगह पर इतमीनान और सुकून हासिल नहीं हो सकता। सजदा करने वाले के लिए सुन्नत है कि वह अपने बाज़ुओं को पहलुओं से, पेट को रानों से तथा रानों को पिंडलियों से अलग रखे, दोनों हाथों को अपने मोंढों के बराबर में रखे और अपने दोनों घुटनों को अपने दोनों पैरों से अलग रखे। फिर वह 'الله أكبر' कहते हुए, अपना सिर उठाए और अपने बाएँ पैर को बिछाकर उसपर बैठ जाए और दाहिने पैर को खड़ा रखे और उसे अपने शरीर के नीचे से निकाल दे और उसकी उँगलियों के अंदरूनी हिस्सों को ज़मीन पर टिका दे ताकि उँगुलियों के किनारों का रुख क़िबले की तरफ हो जाए, क्योंकि अबू हुमैद की हदीस, जो अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहिव सल्लम- की नमाज़ का चित्रण करती है, में ऐसा ही आया है। सजदे से उठकर बैठे, तो अपने हाथों को फैलाकर अपनी उँगलियों को एक-दूसरे से सटाए हुए, अपनी रानों पर रखे और "رب اغفر لي" पढ़े। अगर इन शब्दों को भी पढ़ना चाहे, जिनको इब्ने अब्बास -रज़ियल्लाहु अन्हुमा- की हदीस के मुताबिक, अल्लाह के नबी -

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- दोनों सजदों के दरमियान पढ़ा करते थे, तो कोई हर्ज नहीं है :

" رب اغفر لي وارحمني واهدني وارزقني وعافني "

(ऐ मेरे रब! मुझे क्षमा कर दे, मुझ पर दया कर, मेरा मार्गदर्शन कर, मुझे रोज़ी दे और मुझे स्वस्थ एवं सुखी रख।) इसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है। फिर पहले वाले सजदे ही की तरह, दूसरा सजदा करेगा और अगर चाहे तो अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- की निम्नलिखित हदीस के अनुसार, उसमें दुआ भी करे : "रही बात सजदे की, तो उसमें अधिक से अधिक दुआएँ करो, क्योंकि इसमें तुम्हारी दुआ क़बूल होने के योग्य है।" इसे मुस्लिम ने रिवायत किया है। मुस्लिम ही की एक रिवायत में अबू हुरैरा -रज़ियल्लाहु अन्हु- से वर्णित है कि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- सजदे में यह दुआ पढ़ा करते थे :

" اللهم اغفر لي ذنبي كله دقه وجله وأوله وآخره وعلانيته وسره "

(ऐ अल्लाह! तू मेरे सभी छोटे-बड़े, अगले-पिछले तथा खुले और छिपे पापों को क्षमा कर दे।) फिर "الله أكبر" कहते हुए, अपने दोनों पैरों के पंजों के अगले हिस्सों पर भार देकर और अपने हाथों से घुटनों का सहारा लेते हुए, खड़ा

हो। क्योंकि वाइल बिन हुज्र -रज़ियल्लाहु अन्हु- की हदीस में ऐसा ही आया है। हाँ, अगर बुढ़ापे, **या** बीमारी या कमज़ोरी के कारण ऐसा करना कष्टदायक हो, तो कोई हर्ज नहीं। फिर दूसरी रक्अत, पहली रक्अत की तरह ही पढ़े, सिर्फ तकबीर-ए-तहरीमा को न दोहराए और शुरूआती दुआ (इस्तिफताह की दुआ) न पढ़े, चाहे उसने पहली रक्अत में भी न पढ़ी हो। फिर तशह्हुद के लिए अपने **(बाएँ)** पैर को बिछाकर, रानों पर हाथ रखकर, बायें हाथ की उँगलियों को एक-दूसरे से मिलाकर, उनका रुख क़िबले की तरफ करके फैलाए रखे, दाहिने हाथ की कनिष्ठा और अनामिका उँगलियों को समेट कर, और अंगुष्ठ को मध्यमा के साथ गोला बनाकर रखे और फिर आहिस्ता से तशह्हुद की दुआ पढ़े और दाहिने हाथ की तर्जनी से इशारा करे, जो दरअसल एकेश्वरवाद का इशारा होता है। नमाज़ और उसके अलावा, दूसरी हालतों में भी दुआ करते हुए इससे इशारा करना चाहिए, जैसा कि इब्ने ज़ुबैर -रज़ियल्लाहु अनहु- के कथन से पता चलता है : अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- दुआ करते हुए अपनी तर्जनी से इशारा करते थे, लेकिन उस समय उसे हिलाते नहीं थे। इसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है। तशह्हुद की दुआ, इस प्रकार है :

"التحيات لله والصلوات والطيبات السلام عليك أيها النبي ورحمة الله وبركاته السلام علينا وعلى عباد الله الصالحين أشهد أن لا إله إلا الله وأشهد أن محمداً عبده ورسوله"

(हर प्रकार का सम्मान, सारी दुआएँ एवं समस्त अच्छे कर्म व अच्छे कथन अल्लाह के लिए हैं। ऐ नबी! आपके ऊपर सलाम, अल्लाह की दया तथा उसकी बरकतों की वर्षा हो, हमारे ऊपर एवं अल्लाह के भले बंदों के ऊपर भी सलाम की जलधारा बरसे, मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई सत्य माबूद (पूज्य) नहीं, तथा गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के बंदे तथा उसके रसूल हैं।) अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम - से तशह्हुद के जो भी शब्द आए हैं, उनमें से कोई भी पढ़ सकता है। लेकिन बेहतर यह है कि उसे संक्षिप्त रखे और उसमें कोई इज़ाफ़ा न करे। यह पहले तशह्हुद की बात हुई। फिर यदि नमाज़ केवल दो रक्अत वाली है, तो अल्लाह के नबी - सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम - पर इन शब्दों में दरूद पढ़े :

"اللهم صل على محمد وعلى آل محمد كما صليت على آل إبراهيم إنك حميد مجيد ، وبارك على محمد وعلى آل محمد كما باركت على آل إبراهيم إنك حميد مجيد "

(ऐ अल्लाह! मुहम्मद की प्रशंसा कर और मुहम्मद के परिवार-परिजन की प्रशंसा कर, जिस तरह तूने इबराहीम के परिवार-परिजन की प्रशंसा की है। निश्चय ही तू प्रशंसित एवं प्रतिष्ठित है। तथा मुहम्मद पर बरकत अवतरित कर और मुहम्मद के परिवार-परिजन पर बरकत अवतरित कर, जिस तरह तूने इबराही के परिवार-परिजन पर बरकत उतारी है। निश्चय ही तू प्रशंसित एवं प्रतिष्ठित है।) याद रहे कि दूसरे शब्दों के साथ जो दुरूद आए हैं, उनमें से किसी को भी पढ़ना जायज़ है। आल-ए- मुहम्मद से अभिप्राय, आपके परिवारजन हैं। "التحيات" का मतलब यह है कि हर प्रकार के आदर एवं सम्मान का अधिकारी एवं स्वामी केवल अल्लाह है। "والصلوات" का अर्थ है : दुआएँ। "والطيبات" का अर्थ है : नेक कर्म। ज्ञात रहे कि अल्लाह तआला का आदर-सम्मान किया जाता है, उसपर सलाम (शांति) नहीं भेजा जाता, क्योंकि सलाम दुआ है। दूसरी बात यह है कि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- के अतिरिक्त, किसी दूसरे शख़्स पर एकल रूप से सलाम भेजना जायज़ है, जब अत्यधिक सलाम न भेजा जाए और उसे कुछ लोगों का विशेष चिह्न न बना लिया जाए या इसका प्रयोग विशेष रूप से कुछ ही सहाबा के लिए न किया जाए। नमाज़ के बाहर भी अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- पर दुरूद एवं सलाम भेजना सुन्नत है और जब आपका नाम लिया जाए तो आपपर दुरूद भेजने की बड़ी ताकीद आई है, इसी तरह जुमा के दिन तथा उसकी रात को भी। दुरूद के बाद यह दुआ पढ़ना सुन्नत है :

"اللهم إني أعوذ بك من عذاب جهنم ومن عذاب القبر وأعوذ بك من فتنة المحيا والممات وأعوذ بك من فتنة المسيح الدجال "

(ऐ अल्लाह! मैं तेरी शरण चाहता हूँ नरक के दंड से और क़ब्र की यातना से, तथा मैं तेरी शरण चाहता हूँ जीवन और मृत्यु के फ़ितने से और मैं तेरी शरण चाहता हूँ काने दज्जाल के फ़ितने से।) इसके अतिरिक्त भी जो दुआएँ आई हैं, अगर उनमें से किसी को पढ़े, तो अच्छा है, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने फ़रमाया है : "फिर उसे जो भी दुआ अच्छी लगे, उसका चयन कर ले।" लेकिन इस शर्त के साथ कि इससे मुक़तदियों (इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने वालों) को कष्ट न हो। नमाज़ के इस पड़ाव में, किसी व्यक्ति-विशेष के लिए दुआ करना भी जायज़ है, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने मक्का के कमज़ोर मुसलमानों के लिए दुआ की थी। फिर वह बैठे-बैठे ही सलाम फेर देगा। पहले दाएँ तरफ़ मुँह करके "السلام عليكم ورحمة الله" कहेगा और उसके बाद बाएँ तरफ़ मुँह करके। सलाम फेरते समय चेहरे को दाएँ तथा बाएँ मोड़ना सुन्नत है। बाएँ तरफ चेहरा कुछ ज़्यादा मोड़ेगा कि मुक़तदियों को उसका गाल नज़र आ जाए। इमाम केवल पहले सलाम के शब्दों का उच्चारण ऊँची आवाज़ में करेगा। जबकि उसके अतिरिक्त लोग, सलाम के शब्दों का उच्चारण आहिस्ता से करेंगे। सलाम के शब्दों का उच्चारण खींचकर करने के बजाय रवानी के साथ करना

सुन्नत है। सलाम फेरते समय नमाज़ से निकलने की नीयत कर लेगा और साथ ही रक्षा पर नियुक्त फ़रिश्तों एवं उपस्थित लोगों को सलाम करने की भी नीयत कर लेगा। यदि नमाज़ दो रक्अतों से अधिक वाली हो, तो प्रथम तशह्हुद से फारिग़ होकर, अपने पाँव के पंजों के अगले भागों पर बल देकर तकबीर कहते हुए खड़ा हो जाएगा, और पहले बताए गए तरीक़े के अनुसार शेष रक्अतों को भी पूरा करेगा। लेकिन क़ुरआन का पाठ ऊँची आवाज़ में नहीं करेगा, और न ही सूरत फ़ातिहा के अलावा, कोई दूसरी सूरत या आयतें पढ़ेगा। फिर भी अगर कोई ऐसा कर ले तो मकरूह नहीं समझा जाएगा। फिर दूसरे तशह्हुद में तवर्रुक की स्थिति में बैठैगा, अर्थात् अपने बाएँ पैर को बिछा देगा और दाहिने पैर को खड़ा रखेगा और उन्हें अपनी दाईं ओर निकाल लेगा और अपने नितंब को ज़मीन पर रखेगा। और प्रथम तशह्हुद की दुआ पढ़ने के बाद, अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- पर दुरूद भेजेगा, फिर दुआ करेगा और उसके बाद सलाम फेर देगा। इमाम सलाम फेरने के बाद बहुत देर तक क़िबले की ओर मुँह करके बैठा नहीं रहेगा, बल्कि अपने दाएँ या बाएँ तरफ से मुड़कर मुक़तदियों की तरफ अपना मुँह कर लेगा। मुक़तदी इमाम से पहले सलाम न फेरे, क्योंकि अल्लाह के नबी - सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम - का फरमान है : "बेशक मैं तुम्हारा इमाम हूँ, इसलिए रुकू और सजदा करने तथा सलाम फेरने में मुझसे पहल न करो।" यदि पुरुषों के साथ, स्त्रियाँ भी नमाज़ में शामिल हों, तो वे सलाम फेरते ही तुरंत मस्जिद से चली जाएँगी और पुरुष थोड़ी देर रुके

रहेंगे, ताकि स्त्रियों के साथ उनका मुठभेड़ न हो। नमाज़ समाप्त होने के बाद अल्लाह तआला का गुणगान करना, दुआएँ करना और अपने गुनाहों की अल्लाह से माफी माँगना सुन्नत है। इसलिए सलाम फेरते ही तीन बार "استغفر الله" कहेगा, उसके बाद ये दुआएँ पढ़ेगा :

"اللهم أنت السلام ومنك السلام تباركت يا ذا الجلال والإكرام، لا إله إلا الله وحده لا شريك له، له الملك وله الحمد وهو على كل شيء قدير، ولا حول ولا قوة إلا بالله، لا إله إلا الله ولا نعبد إلا إياه، له النعمة وله الفضل وله الثناء الحسن، لا إله إلا الله مخلصين له الدين ولو كره الكافرون"

(ऐ अल्लाह! तू ही सलाम है, और तेरी ही ओर से सलामती प्राप्त होती है। ऐ प्रताप और सम्मान वाले! तू बहुत बरकत वाला है। अल्लाह के सिवा कोई सत्य पूज्य नहीं, वह अकेला है, उसका कोई साझी नहीं, उसी का राज्य है और उसी के लिए समस्त प्रशंसाएँ हैं, और वह हर चीज़ पर सर्वशक्तिमान है। अल्लाह के सामर्थ्य के बिना न किसी बुराई से बचने की शक्ति है और न किसी भलाई के करने की ताक़त। अल्लाह के सिवा कोई सत्य पूज्य नहीं और हम केवल उसी की इबादत करते हैं। हर नेमत और अनुकंपा उसी की है और उसी के लिए सब अच्छी प्रशंसा है। अल्लाह के सिवा कोई सत्य पूज्य नहीं, हमारी उपासना उसी के लिए विशिष्ट है, भले ही काफ़िरों को बुरा लगे।)

" اللهم لا مانع لما أعطيت ولا معطي لما منعت ولا ينفع ذا الجد منك الجد "

(ऐ अल्लाह! जो तू प्रदान करे, उसे कोई रोकने वाला नहीं और जिसे तू रोके, उसे कोई प्रदान करने वाला नहीं। किसी को उसकी दौलत और शान, तेरे सामने लाभ नहीं पहुँचा सकती है।) फिर वह 33 बार سبحان الله, एवं 33 बार الحمد لله, और 33 बार الله أكبر पढ़े और फिर यह दुआ पढ़कर 100 की गिनती पूरी करे :

" لا إله إلا الله وحده لا شريك له له الملك وله الحمد وهو على كل شيء قدير" (अल्लाह के अतिरिक्त कोई सत्य पूज्य नहीं, वह अकेला है, उसका कोई साझी नहीं, उसी के लिए राज्य और उसी के लिए सब प्रशंसा है और वह प्रत्येक चीज़ का सामर्थ्य रखता है।) फ़ज्र और मग्रिब की नमाज़ समाप्त होने के बाद, किसी से बात करने से पहले, सात बार "اللهم أجرني من النار" (ऐ अल्लाह! मुझे जहन्नम से बचा ले।) पढ़ना चाहिए। दुआ आहिस्ता से पढ़ना और इसी तरह अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- से साबित दुआएँ ही पढ़ना बेहतर है। दुआ शिष्टाचार तथा विनय के साथ, पूरे मन से, आशा और भय के साथ करना चाहिए, क्योंकि हदीस में आया है : "किसी ग़ाफिल (अचेत) दिल से माँगी हुई दुआ क़बूल नहीं की जाती है।" अपनी दुआओं में अल्लाह के नामों, गुणों

और एकेश्वरवाद को माध्यम बनाना चाहिए, और दुआ के क़बूल होने के जो खास समय हैं, उनमें दुआ करनी चाहिए, जैसे रात के अंतिम तिहाई भाग में, अज़ान और इक़ामत के बीच में, फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद और जुमे के दिन के आखिरी हिस्से में। दुआ के क़बूल होने की प्रतीक्षा करनी चाहिए और जल्दी मचाते हुए यह नहीं कहना चाहिए कि मैं दुआ करता रहा, लेकिन मेरी दुआ क़बूल नहीं हुई। दुआ, विशेष रूप से अपने लिए करने में कोई हर्ज नहीं है, लेकिन जब दुआ पर आमीन कही जा रही हो, यानी सामूहिक रूप से दुआ की जा रही हो, तो उसमें अपने आपको खास कर लेना सही नहीं है। इसी तरह ऊँची आवाज़ में दुआ करना भी मकरूह है।

नमाज़ में थोड़ा भी इधर-उधर मुड़ना, आकाश की ओर देखना, किसी स्थापित चित्र या आदमी के चेहरे की तरफ मुँह करके नमाज़ पढ़ना, आग की तरफ रुख करना, चाहे वह एक चिराग ही क्यों न हो, और सजदे में अपने बाज़ुओं को बिछाना मकरूह है। पेशाब ज़ोर का लगा हो या शौच करने की अति ज़रूरत हो या खाना लग चुका हो और खाने की इच्छा भी जागृत हो, तो ऐसे में नमाज़ शुरू नहीं करना चाहिए, बल्कि उसे विलंब कर देना चाहिए, चाहे जमाअत ही क्यों ना छूट जाए। नमाज़ में कंकड़ियों को छूना, एक हाथ की उँगलियों को दूसरे हाथ की उँगलियों में घुसाना, बैठक में अपने दोनों हाथों पर टेक लगाना, दाढ़ी को छूना, बाल का जूड़ा बनाना और कपड़े समेटना, मकरूह (नापसंदीदा) है। अगर जमाही आ रही हो, तो जहाँ तक हो

सके, रोकने की कोशिश करनी चाहिए और अगर रोक न पाए, तो मुँह पर हाथ रख देना चाहिए। नमाज़ के दौरान में अकारण मिट्टी को बराबर करना मकरूह है। नमाज़ी, अपने सामने से गुज़रने वाले को, चाहे आदमी हो या कुछ और हो और चाहे नमाज़ फ़र्ज़ हो या नफ़्ल, धक्का देकर ही सही, रोकेगा। अगर गुज़रने वाला न माने, तो उससे लड़ेगा, चाहे थोड़ा बहुत चलना ही क्यों न पड़े। नमाज़ी के सामने अगर सुतरा रखा हो, तो उसके और सुतरे के दरमियान से गुज़रना हराम है और अगर सुतरा न हो, तब भी उसके सामने से गुज़रना हराम है। नमाज़ी, नमाज़ की हालत में भी साँप, बिच्छू और जूँ को मार सकता है, कपड़े और अमामे को दुरुस्त कर सकता है, कोई चीज़ उठा या रख सकता है, और ज़रूरत पड़ने पर हाथ, चेहरे और आँख का इशारा कर सकता है। नमाज़ी को सलाम कहना मकरूह नहीं है और नमाज़ी इशारे से सलाम का जवाब भी दे सकता है। अगर इमाम पर पाठ गडमड हो जाए, या गलती हो जाए, तो मुक़तदी उस भाग को पढ़कर बता सकता है। अगर नमाज़ के दौरान उसे कोई चीज़ पेश आ जाए, तो पुरुष "سبحان الله" कहेगा और स्त्री ताली बजाएगी। अगर किसी को मस्जिद के अंदर नमाज़ पढ़ते हुए थूकने या बलगम फेंकने की आवश्यकता पड़ जाए, तो अपने कपड़े में थूक लेगा और अगर मस्जिद के बजाय कहीं और नमाज़ पढ़ रहा हो, तो अपने बाएँ तरफ थूकेगा। सामने या दाएँ तरफ थूकना मकरूह है।

मुक़तदी के अलावा किसी और के लिए बिना सुतरा के नमाज़ पढ़ना मकरूह है, भले ही उसे (अपने सामने से) किसी के गुज़रने की आशंका न हो। सुतरा दीवार या कोई दृश्यमान चीज़ जैसे भाला, या इसके अलावा कोई और

चीज़ कजावे के पिछले भाग में लगी लकड़ी के समान हो सकता है। सुन्नत यह है कि आदमी सुतरे से निकट खड़ा हो, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फरमान है : "जब तुममें से कोई नमाज़ पढ़े, तो सुतरा लेकर पढ़े और उससे क़रीब रहे।" नमाज़ी सुतरे से थोड़ा हटकर खड़ा होगा, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- से ऐसा ही करना साबित है। अगर सुतरा के लिए कुछ न मिल सके, तो एक लकीर खींच लेगा और फिर अगर उसके पीछे से कुछ गुज़रे, तो मकरूह नहीं है। अगर सुतरा न हो अथवा सुतरे की जगह और नमाज़ी के दरमियान से औरत, कुत्ता या गधा गुज़र जाए तो नमाज़ वयर्थ हो जाएगी।

नमाज़ी के लिए क़ुरआन देखकर पढ़ना, रहमत की आयत आए तो अल्लाह से उसकी रहमत माँगना और यातना की आयत आए तो उससे पनाह माँगना जायज़ है।

क़ियाम (खड़ा होना) फ़र्ज़ नमाज़ का एक स्तंभ है। इसकी दलील, अल्लाह तआला का यह कथन है : ﴿وَقُومُواْ لِلَّهِ قَٰنِتِينَ﴾ "और अल्लाह तआला के लिए नम्रतापूर्वक खड़े रहा करो।" (सूरतुल-बक़रा : 238) सिवाय उस व्यक्ति के जो असमर्थ है, या नंगा है, या डरा हुआ है, या जो (खड़े होने में) असमर्थ महल्ले के इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ रहा है। अगर कोई इमाम को रूकू की अवस्था में पाए, तो तकबीर-ए-तहरीमा के बराबर खड़ा होना ज़रूरी है।

तकबीर-ए-तहरीमा (पहली तकबीर) कहना, इमाम हो या अकेले नमाज़ पढ़ने वाला व्यक्ति, सबके लिए नमाज़ का एक स्तंभ है। यही हुक्म सूरत फ़ातिहा पढ़ने और रुकू करने का भी है। क्योंकि अल्लाह तआला ने फरमाया है : ﴿يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُواْ ٱرۡكَعُواْ وَٱسۡجُدُواْ﴾ "ऐ वे लोगो जो ईमान लाए हो! रुकू और सजदा करो।" तथा अबू हुरैरा -रज़ियल्लाहु अन्हु- से वर्णित है कि एक आदमी मस्जिद में दाखिल हुआ, नमाज़ पढ़ी और फिर अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- के पास आकर आपको सलाम किया, तो आपने फरमाया : "वापस जाकर दोबारा नमाज़ पढ़ो, क्योंकि तुमने नमाज़ नहीं पढ़ी।" उसने ऐसा तीन बार किया, फिर कहने लगा : उस हस्ती की क़सम जिसने आपको सत्य के साथ नबी बनाकर भेजा है, मैं इससे बेहतर नहीं पढ़ सकता, इसलिए आप मुझे सिखला दें। इसपर, अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने फरमाया : "जब तुम नमाज़ के लिए खड़े हो तो " الله أكبر" कहो, फिर क़ुरआन में से जो कुछ याद हो, उसे पढ़ो। फिर रुकू करो, यहाँ तक कि रुकू में इतमीनान प्राप्त हो जाए, फिर रुकू से उठो और इतने क्षणों तक खड़े रहो कि संतुलित हो जाओ। फिर सजदे में जाओ और इतनी देर तक सजदे में रहो कि इतमीनान प्राप्त हो जाए। फिर सजदे से उठकर इतनी देर तक बैठो कि इतमीनान प्राप्त हो जाए और फिर अपनी पूरी नमाज़ में ऐसा ही करो।" इसे मुहद्दिसों के एक समूह (बुखारी, मुस्लिम, तिर्मिज़ी, अबू दाऊद, नसाई, इब्न माजा और अहमद बिन हंबल) ने रिवायत किया है। इस हदीस से मालूम होता है कि इसमें नमाज़ के जितने भी तत्व बताए गए हैं, उनमें से कोई भी तत्व किसी भी हाल में माफ़

नहीं होगा। अगर ऐसा होता, तो उस देहाती आदमी से ज़रूर माफ़ होता और उसे नमाज़ दोहराने की ज़रूरत नहीं पड़ती।

इससे यह भी मालूम होता है कि सुकून और स्थिरता के साथ उक्त सभी कार्यों को करना, नमाज़ का एक स्तंभ है। हुज़ैफ़ा - रज़ियल्लाहु अन्हु - ने एक आदमी को देखा कि वह अपने रुकू और सजदों को सम्पूर्ण रूप से अदा नहीं कर रहा है, तो उससे कहा कि तुमने नमाज़ पढ़ी ही नहीं और अगर तुम्हारी मृत्यु इसी हाल में हो गई, तो उस प्रकृति (इस्लाम धर्म) पर नहीं मरोगे, जिसपर अल्लाह तआला ने मुहम्मद -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- को पैदा किया था।

आख़िरी तशह्हुद भी नमाज़ का एक स्तंभ है, जैसा कि अब्दुल्लाह बिन मसऊद -रज़ियल्लाहु अन्हु- ने कहा है कि हम लोग, तशह्हुद के फ़र्ज़ होने से पहले : "السلام على الله السلام على جبريل وميكائيل" पढ़ा करते थे, तो अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने फ़रमाया : "तुम लोग ऐसा न कहा करो, बल्कि "التحيات لله" पढ़ा करो।" इसे नसाई ने रिवायत किया है और इसके सभी वर्णनकर्ता सिक़ा (विश्वसनीय) हैं।

नमाज़ की ऐसी वाजिब (अनिवार्य) चीजें जो भूल जाने से माफ़ हो जाती हैं, आठ हैं : पहली तकबीर के अलावा सारी तकबीरें, इमाम और अकेले नमाज़ पढ़ने वाले का "سمع الله لمن حمده" कहना, हर नमाज़ी का "ربنا ولك الحمد" कहना, रुकू और सजदों की तसबीहें, " رب اغفر

لي" कहना, पहला तशह्हुद और उसके लिए बैठना। इन स्तंभों तथा अनिवार्य चीज़ों के अतिरिक्त, नमाज़ की अन्य सारी चीज़ें सुन्नत हैं, चाहे उनका संबंध कथन से हो या कर्म से।

कथन से संबंधित सुन्नतें 17 हैं : नमाज़ शुरू करने की दुआ (दुआ-ए-इस्तिफ़ताह); अऊज़ुबिल्लाहि मिनश-शैतानिर्रजीम और बिस्मिल्लाहिर-रहमानिर्रहीम पढ़ना; आमीन कहना; फ़ज्र, जुमा, ईद, नफ़्ल और चार रक्अतों वाली नमाज़ों की पहली दो रकअतों में कोई दूसरी सूरत पढ़ना; क़ुरआन की सूरतों को ऊँची और आहिस्ता आवाज़ में पढ़ना, " ملء السماء والأرض" वाली दुआ आख़िर तक पढ़ना, रुकू और सजदों में एक बार से अधिक तसबीह पढ़ना, "رب اغفر لي" पढ़ना; आख़िरी तशह्हुद में चार चीज़ों से अल्लाह की शरण माँगना और अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- के परिजनों पर दुरूद भेजना और आपके लिए तथा उनके लिए बरकत की दुआ करना। इनके अलावा, जो भी हैं, सब कार्य से संबंधित सुन्नतें हैं; जैसे तकबीर-ए-एहराम के समय, रुकू में जाते और रुकू से उठते समय दोनों हाथों को उठाने पर उंगलियाँ मिला हुईं, फैली हुई और क़िबला रुख हों; और उसके बाद दोनों हाथों को रखना; बाएँ हाथ की कलाई को दाएँ हाथ से पकड़ना और दोनों को नाभि के नीचे रखना; सजदे की जगह पर नज़र रखना; क़ियाम में दोनों क़दमों को अलग-अलग रखना और बारी-बारी दोनों का सहारा लेना; क़ुरआन को ठहर-ठहर कर पढ़ना; इमाम का क़िराअत हल्की करना; पहली रक्अत को दूसरी रक्अत से ज़्यादा लंबा करना; रुकू में अपने

हाथों से अपने घुटनों को पकड़ना और उँगलियाँ फैलाए हुए रखना; पीठ सीधी रखना और सिर को उसके बराबर में रखना; सजदे में जाते हुए दोनों घुटनों को दोनों हाथों से पहले ज़मीन पर रखना; क़ियाम के लिए उठते हुए हाथों को घुटनों को उठाने से पहले उठाना; सजदे में पेशानी और नाक को ज़मीन से टिकाना; दोनों बाज़ुओं को पहलुओं से अलग रखना; पेट को रानों से और रानों को पिंडलियों से अलग रखना; दोनों क़दमों को खड़ा रखना और पैर की उँगलियों के भीतरी भाग को अलग-अलग रखते हुए ज़मीन से सटा देना; सजदे की हालत में दोनों हाथों को दोनों मोंढों की सीध में इस तरह रखना कि उंगलियाँ फैली हुई रहें; हाथों की उँगुलियों का रुख इस तरह क़िबले की ओर करना कि वे एक-दूसरे से सटी रहें; नमाज़ी का अपने हाथों और पेशानी को एक साथ उठाना; दूसरी रक्अत के लिए अपने क़दमों के पंजों के अगले हिस्सों के बल अपने हाथों को अपनी रानों पर टिकाते हुए खड़ा होना; दोनों सजदों के बीच और तशह्हुद में पैर बिछाकर बैठना; दूसरे तशह्हुद में तवर्रुक करना; दोनों हाथों को दोनों रानों पर फैलाकर रखना; दोनों सजदों के दरमियान और तशह्हुद में उँगलियों को मिलाए हुए उनका रुख क़िबले की तरफ रखना; दाहिने हाथ की कनिष्ठा और अनामिका को समेट लेना और मध्यमा उंगली के साथ अंगूठे को मिलाकर गोल दायरा बनाना और तर्जनी से इशारे करना; सलाम फेरते समय दाएँ और बाएँ मुड़ना, और मुड़ते समय दाएँ की अपेक्षा बाएँ को प्राथमिकता देना।

रही बात सजदा-ए-सह्व (भूलने का सजदा) की, तो इमाम अहमद कहते हैं कि इस सिलसिले में अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम-

से पाँच बातें वर्णित हैं : दो रक्अत पढ़कर सलाम फेर दिया तो सजदा किया, तीन रक्अत पढ़कर सलाम फेर दिया तो सजदा किया, नमाज़ कम पढ़ ली तो सजदा किया, ज़्यादा पढ़ डाली तो सजदा किया और दो रक्अत के बाद तशह्हुद पढ़े बिना खड़े हो गए तो सजदा किया। ख़त्ताबी कहते हैं : विद्वानों का इस मसअले में इन्हीं पाँच हदीसों यानी इब्ने मसऊद की दो हदीसों और अबू सईद, अबू हुरैरा और इब्ने बुहैना की एक-एक हदीस पर आधार है। सजदा-ए-सह्व, नमाज़ में कमी-बेशी कर देने और किसी फ़र्ज़ एवं नफ़्ल में शक हो जाने पर किया जाता है। लेकिन अगर सह्व (भूल) बहुत ज़्यादा हो जाए और भ्रम (वसवसा) की स्थिति उत्पन्न हो जाए, तो उसे त्यागते हुए अधिक प्रबल संभावना पर अमल करेगा। यही बात वुज़ू, स्नान और गंदगी दूर करने के मामले में भी लागू होती है। अतः, यदि कोई व्यक्ति नमाज़ का कोई कार्य, जैसे क़ियाम, रुकू, सजदा और बैठक आदि जान-बूझकर बढ़ा दे, तो नमाज़ व्यर्थ हो जाएगी, और यदि ऐसा भूलवश हो जाए, तो उसके लिए सजदा-ए-सह्व करेगा। क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने फरमाया है : "जब कोई आदमी अपनी नमाज़ में कमी या बेशी कर दे, तो वह सह्व (त्रुटि) के दो सजदे कर ले।" इसे मुस्लिम ने रिवायत किया है। और अगर बीच में याद आ जाए, तो बिना तकबीर के नमाज़ की तरतीब की ओर लौट जाए। अगर एक रकत अधिक पढ़ने लगा हो, तो जैसे ही याद आए, उसे छोड़ दे और उससे पहले की अवस्था को आधार मानकर उसी की ओर लौट जाए। इस क्रम में, अगर उसने पहला तशह्हुद पढ़ लिया था तो दोबारा तशह्हुद न पढ़े। सह्व का सजदा करे और सलाम फेर दे। मसबूक़ (बाद में

इमाम के साथ शरीक होने वाला) अतिरिक्त रकूअत को शुमार न करे और जिस व्यक्ति के उसके अतिरिक्त होने का पता हो, वह इमाम के साथ शरीक न हो। अगर इमाम बनकर नमाज़ पढ़ा रहा हो या कोई अकेले नमाज़ पढ़ रहा हो और दो विश्वसनीय व्यक्ति उसे सचेत करें, तो उसके लिए लौटना अनिवार्य हो जाएगा। अलबत्ता, यदि केवल एक आदमी उसे सचेत करे, तो लौटना सिर्फ उसी सूरत में चाहिए जब उसे यक़ीन हो जाए कि टोकने वाले ने सही टोका है, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- अकेले ज़ुल-यदैन की बात पर नमाज़ में नहीं लौटे थे।

नमाज़ मामूली कार्य से बातिल नहीं होती, जैसे अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का आयशा -रज़ियल्लाहु अन्हा- के लिए दरवाज़ा खोलना और अपनी नतनी उमामा -रज़ियल्लाहु अन्हा- को नमाज़ की हालत में गोद में उठाना एवं उतारना। इसी तरह, अगर नमाज़ में एक स्थान की बात दूसरे स्थान पर कह दे, जैसे कि बैठक में क़ुरआन पढ़ना, या क़ियाम में तशह्हुद पढ़ना, तो इसके कारण नमाज़ बातिल नहीं होगी।

उक्त परिस्थिति में सजदा-ए-सह्व कर लेना उचित होगा, क्योंकि इस सिलसिले में अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का यह कथन आम है : "जब तुममें से कोई भूल जाए तो दो सजदे कर ले।" यदि कोई नमाज़ पूरी करने से पहले जान-बूझकर सलाम फेर दे, तो नमाज़ बातिल हो जाएगी। परंतु, यदि भूलवश सलाम फेर दे और थोड़ी ही देर बाद याद आ

जाए, तो नमाज़ पूरी करेगा, भले ही वह मस्जिद से निकल गया हो, या नमाज़ के विषय में मामूली बात कर ली हो। इसी तरह, अगर भूलवश बात कर ले या नमाज़ ही की अवस्था में सो जाए और सोते में बात कर ले या फिर क़ुरआन पढ़ते हुए अचानक उसकी ज़ुबान पर कोई ऐसा शब्द आ जाए जो क़ुरआन का न हो, तो नमाज़ बातिल नहीं होगी। हाँ, यदि ठहाकेदार अंदाज़ में हँस दे, तो नमाज़ बातिल हो जाएगी। इस बात पर विद्वान एकमत हैं। लेकिन मुस्कुराने से बातिल नहीं होगी।

अगर तकबीर-ए-तहरीमा के अतिरिक्त नमाज़ का कोई दूसरा स्तंभ भूल जाए और बाद वाली रक्अत में क़ुरआन का पाठ करते हुए याद आए, तो वह रक्अत बातिल (व्यर्थ) हो जाएगी, जिसका स्तंभ भूल गया था और दूसरी रक्अत उसका बदल बन जाएगी। इमाम अहमद कहते हैं कि शुरूआती दुआ (सना) को दोबारा नहीं पढ़ेगा, लेकिन यदि क़ुरआन की तिलावत शुरू करने से पहले याद आ जाए, तो फिर उसे और उसके बाद की दुआएँ पढ़ लेगा। यदि पहला तशह्हुद भूलकर उठने लगे, तो जब तक पूरी तरह खड़ा न हो जाए, लौटकर बैठना और उसे पढ़ना अनिवार्य होगा। इसका प्रमाण मुगीरा -रज़ियल्लाहु अन्हु- की वह हदीस है, जिसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है। और अगर इमाम खड़ा हो गया, तो मुक़्तदी के लिए इमाम का अनुसरण करते हुए खड़ा हो जाना ज़रूरी होगा और ऐसे में उससे तशह्हुद की अनिवार्यता समाप्त हो जाएगी और उसे सजदा-ए-सह्व करना होगा। जिसे रक्अतों की तादाद में

शक हो जाए, तो वह यक़ीनी संख्या को आधार मानते हुए रक्अत का निर्धारण कर लेगा। जबकि मुक़तदी, शक होने पर इमाम के कृत्य का अनुसरण करेगा। अगर कोई इमाम को रुकू की हालत में पाए और शक हो जाए कि इमाम ने उसके रुकू में शरीक होने से पहले ही सिर तो नहीं उठा लिया था, तो उस रक्अत को शुमार नहीं करेगा, बल्कि यक़ीन को आधार मानकर रकअतों का निर्धारण कर शेष रकअतों को शुमार करेगा और इमाम के सलाम फेरने के बाद छूटी हुई रकअतों को पढ़ेगा, फिर सजदा-ए-सह्व करेगा। मुक़तदी के लिए सजदा-ए-सह्व करना उसी सूरत में ज़रूरी होगा, जब इमाम सजदा-ए-सह्व करे। ऐसी सूरत में अगर उसने तशह्हुद पूरा न भी किया हो, तो इमाम के साथ सजदा-ए-सह्व करने के बाद पूरा करेगा। मसबूक़ (जमाअत में बाद में शरीक होने वाला) यदि अपने इमाम के साथ सह्व के कारण सलाम फेर ले, तो सजदा-ए-सह्व करेगा, इसी तरह इमाम के साथ कोई त्रुटि करे तो सजदा-ए-सह्व करेगा और बाद में अकेले पढ़े जाने वाले भाग में कोई त्रुटि करे, तब भी सजदा-ए-सह्व करेगा। सजदा-ए-सह्व का स्थान सलाम से पहले है। परंतु, यदि एक या एक से अधिक रक्अत भूल जाए तो इमरान और ज़ुल-यदैन -रज़ियल्लाहु अन्हुमा- की हदीसों पर अमल करते हुए, सलाम फेरने के बाद सजदा-ए-सह्व करेगा। इसी तरह अगर अधिक प्रबल संभावना को आधार मानकर नमाज़ पूरी करे, तो अली और इब्ने मसऊद -रज़ियल्लाहु अन्हुमा- की हदीसों पर अमल करते हुए, सलाम फेरने के बाद

सजदा-ए-सह्व करेगा। लेकिन यह सजदा-ए-सह्व मुस्तहब होगा, वाजिब नहीं। और अगर सलाम से पहले सजदा-ए-सह्व करना भूल जाए या सलाम फेरने के बाद उसके बारे में याद न रहे, तो जब तक ज़्यादा समय न गुज़रे, उसे अदा कर लेगा। सजदा-ए-सह्व, उसी तरह करना है जिस तरह नमाज़ का सजदा किया जाता है और उसमें पढ़ी जाने वाली दुआ और उससे सिर उठाने के बाद पढ़ी जाने वाली दुआएँ भी वही हैं, जो नमाज़ के सजदों की हैं।

(अध्याय : स्वैच्छिक नमाज़)

अबुल अब्बास कहते हैं : जिस आदमी की फ़र्ज़ नमाज़ें पूरी नहीं होंगी, क़ियामत के दिन उसकी नमाज़ों की पूर्ति नफ़्ल नमाज़ से की जाएगी। इसके विषय में एक मरफ़ू हदीस आई है। ज़कात और दूसरे कर्मों का मामला भी यही है। याद रहे कि सबसे उत्तम स्वैच्छिक इबादत जिहाद है, फिर उससे संबंधित चीज़ें जैसे कि उसमें खर्च करना इत्यादि, फिर ज्ञान सीखना और सिखाना। अबू दर्दा - रज़ियल्लाहु अन्हु - कहते हैं : ज्ञानी और ज्ञान सीखने वाला, पुण्य में बराबर हैं और अन्य सभी लोग मूर्ख हैं जिनमें कोई भलाई नहीं है। इमाम अहमद कहते हैं : सही नीयत के साथ ज्ञान प्राप्त करना, सबसे उत्तम कर्म है। उन्होंने यह भी कहा है कि मेरी नज़र में रात का कुछ अंश ज्ञान सीखने-सिखाने में लगाना, पूरी रात जागकर इबादत करने से उत्तम है। उन्होंने यह भी कहा है कि हर आदमी पर कम से कम इतना ज्ञान अर्जन करना अनिवार्य है, जिससे वह अपने धर्म पर अमल कर सके। पूछा गया : जैसे कौन-सी चीज़? फरमाया : उतना ज्ञान जिसे नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता। जैसे नमाज़ और रोज़ा आदि का ज्ञान। फिर उसके बाद नमाज़ की बारी आती है, इस हदीस के मद्देनज़र : "धर्म के संमार्ग पर डटे रहो, तुम सभी अच्छे कर्मों को गिन नहीं सकते और याद रखो कि तुम्हारा सबसे उत्तम कर्म नमाज़ है।" फिर उसके बाद, ऐसे काम हैं जिनका लाभ दूसरों तक पहुँचता है, जैसे किसी रोगी का हाल पूछने के लिए जाना, या किसी मुसलमान की ज़रूरत पूरी करना, या लोगों के बीच मेल-मिलाप कराना। क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फ़रमान है : "क्या मैं तुम्हें तुम्हारे सबसे उत्तम कर्म के बारे में

न बता दूँ, जो श्रेष्ठता में नमाज़-रोज़े से भी बढ़ा हुआ है? वह आपस में मेल-मिलाप कराना है, क्योंकि आपस में फूट एवं बिगाड़ ही धर्म को जड़ से उखाड़ फेंकना वाला है।" इसे तिरमिज़ी ने सहीह करार दिया है। इमाम अहमद ने कहा : जनाज़े के पीछे-पीछे चलना, नफ़्ल नमाज़ पढ़ने से अत्तम है। याद रहे कि जिन अच्छे कर्मों का लाभ दूसरों को पहुँचता है, वह अलग-अलग होता है, चुनाँचे किसी निकटवर्ती ज़रूरतमंद को दान देना, दास मुक्त करने से उत्तम है और यह किसी अजनबी व्यक्ति को दान करने से उत्तम है। हाँ, यदि अकाल का समय हो, तो बात अन्य होगी। फिर हज की बारी आती है। अनस -रज़ियल्लाहु अन्हु- से मरफ़ूअन वर्णित है : "जो ज्ञान प्राप्त करने के लिए निकला, वह वापस आने तक अल्लाह के मार्ग में होता है।" इमाम तिरमिज़ी कहते हैं : यह हदीस हसन ग़रीब है। शैख़ कहते हैं : ज्ञान सीखना और सिखाना, जिहाद में दाखिल है और यह उसी का एक प्रकार है। वह कहते हैं : ज़ुल-हिज्जा महीने के दस शुरूआती दिनों में रात-दिन इबादत में लीन रहना, उस जिहाद से उत्तम है जिसमें जान और माल का नुक़सान नहीं होता। इमाम अहमद से नकल किया गया है कि हज्ज के समान कोई इबादत नहीं है। क्योंकि उसमें जो थकान होती है, वह कहीं और नहीं होती, तथा उसमें जो हज्ज अनुष्ठान के स्थल हैं, और उसमें एक ऐसा दृश्य (अरफा का जमावड़ा) है जिसके समान इस्लाम में कोई दूसरा नहीं। साथ ही उसमें धन और शरीर दोनों को खपाना पड़ता है। अबू उमामा -रज़ियल्लाहु अन्हु- बयान करते हैं कि एक आदमी ने अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम-

से पूछा कि सबसे उत्तम कर्म क्या है, तो आपने फरमाया : "तुम रोज़ा रखो। उस जैसा कोई पुण्य-कर्म नहीं है।" इसे अहमद आदि ने हसन सनद के साथ रिवायत किया है। शैख़ कहते हैं : हर पुण्य का कार्य, आवश्यकता और हित के अनुसार अलग-अलग परिस्थितियों में सर्वश्रेष्ठ हो सकता है, क्योंकि, अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- और आपके उत्तराधिकारियों ने इसे किया है। इसी के समान इमाम अहमद का यह कथन भी है : देखो कि कौन-सा कार्य तुम्हारे दिल की दुनिया को अधिक सुधारने वाला है, फिर उसी को करो। इमाम अहमद ने चिंतन को नमाज़ तथा सदक़ा से अधिक श्रेष्ठ कहा है, जिससे स्पष्ट होता है कि दिल के द्वारा किया जाने वाला कार्य, अंगों के द्वारा किए जाने वाले कार्य से उत्तम है, और यह स्पष्ट होता है कि असहाब की मुराद, अंगों द्वारा किए जाने वाले कर्म हैं। इस बात का समर्थन यह हदीस भी करती है : "अल्लाह की नज़र में सबसे उत्तम कर्म, अल्लाह के लिए प्रेम करना और अल्लाह ही के लिए घृणा करना है।" जबकि एक हदीस में है : "यह ईमान का सबसे मज़बूत कड़ा है ...।"

सबसे अधिक ताकीदी नफ़्ल चंद्रग्रहण और सूर्यग्रहण की नमाज़ है, फिर वित्र, फिर फ़ज्र की सुन्नत, फिर मग्रिब की सुन्नत और फिर शेष रवातिब सुन्नतें हैं। वित्र की नमाज़ का वक्त इशा के बाद से लेकर फ़ज्र का उजाला फैल जाने तक है। जबकि उसका सबसे उत्तम वक्त रात का आख़िरी हिस्सा है, लेकिन उसके लिए, जिसको उस वक्त जाग जाने का विशवास हो। अगर ऐसा न हो, तो सोने से पहले पढ़ लेना चाहिए। वित्र की सबसे कम तादाद एक रक्अत है और

अधिक से अधिक ग्यारह रक्अत। उसे पढ़ने का सबसे उत्तम तरीक़ा यह है कि दो रक्अत पर सलाम फेरा जाए और फिर आख़िर में एक रक्अत पढ़ कर इसे वित्र का रूप दे दे। लेकिन, इसके अतिरिक्त, वित्र अदा करने के जो भी तरीक़े, अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- से सहीह सनद से साबित हैं, उनमें से किसी भी तरीक़े से अदा किया जा सकता है। इसमें उत्तमता का सबसे कम दर्जा तीन रक्अत पढ़ना है, जिसे दो सलाम से अदा करना उत्तम है, जबकि एक सलाम से भी अदा किया जा सकता है। वैसे मग़्रिब की तरह भी पढ़ा जा सकता है।

रवातिब सुन्नतों की संख्या दस है और उनको घर पर ही पढ़ना सबसे उत्तम है। वे हैं : ज़ुहर से पहले दो रक्अत और बाद में दो रक्अत, मग़्रिब की नमाज़ के बाद दो रक्अत, इशा के बाद दो रक्अत और फ़ज्र की नमाज़ से पहले दो रक्अत।

फ़ज्र की दो रक्अतों को हल्का पढ़ना चाहिए। पहली रक्अत में सूरत फ़ातिहा के साथ "قل يا ايها الكافرون" और दूसरी रक्अत में " قل هو الله أحد" पढ़ना चाहिए, या फिर पहली रक्अत में सूरत बक़रा की यह आयत :

{قولوا آمنا بالله وما أنزل إلينا}

और दूसरी रक्अत में यह आतय पढ़नी चाहिए :

{قل يا أهل الكتاب تعالوا إلى كلمة سواء بيننا وبينكم}

सुनन-ए-रवातिब को सवारी पर भी पढ़ा जा सकता है।

जुमा से पहले कोई सुन्नत नहीं है, जबकि उसके बाद दो अथवा चार रक्अत पढ़ना सुन्नत है। सुन्नत, तहिय्यतुल मस्जिद की ओर से काफ़ी है। फ़र्ज़ और सुन्नत के बीच बातचीत या खड़े होकर फ़ासला करना सुन्नत है, जैसा मुआविया -रज़ियल्लाहु अनहु- की हदीस में आया हुआ है। अगर किसी से कोई सुन्नत छूट जाए, तो बाद में पढ़ लेना मुस्तहब है। अज़ान तथा इक़ामत के बीच नफ़्ल नमाज़ पढ़ना मुस्तहब है।

तरावीह, अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- की जारी की हुई सुन्नत है। उसे जमाअत के साथ अदा करना अफ़ज़ल है और उसमें इमाम ऊँची आवाज़ से क़ुरआन पढ़ेगा, क्योंकि ऐसा ही पूर्वजों से नकल होकर हम तक आया है। साथ ही हर दो रक्अत पर सलाम भी फेरेगा, क्योंकि हदीस में है : "रात की (नफ़्ल) नमाज़ दो-दो रक्अत है।" तरावीह का समय इशा के बाद से फ़ज्र का उजाला फैलने तक है और वित्र से पहले पढ़ना सुन्नत है। वित्र उसके बाद पढ़ी जाएगी। अल्बत्ता, यदि आदमी तहज्जुद का भी पाबंद हो, तो तहज्जुद के बाद वित्र पढ़ेगा। क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का कथन है : "तुम लोग अपनी रात की अंतिम नमाज़, वित्र को

बनाओ।" यदि ऐसा व्यक्ति, जो तहज्जुद का पाबंद हो, इमाम के साथ पूरी नमाज़ में शामिल रहना चाहे, तो इमाम के सलाम फेरने के बाद खड़ा हो जाएगा और एक रक्अत पढ़कर वित्र को जोड़ा बना लेगा। क्योंकि रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फ़रमान है : "जो इमाम के साथ उसके सलाम फेरने तक खड़ा (नमाज़ पढ़ता) रहे, उसके लिए रात भर नमाज़ पढ़ने का सवाब लिख दिया जाता है।" इसे तिरमिज़ी ने सहीह करार दिया है।

इस बात पर उलमा का मतैक्य है कि क़ुरआन को याद करना मुस्तहब है। यही नहीं, क़ुरआन का पाठ करना सर्वोत्तम ज़िक्र है। क़ुरआन का उतना भाग याद करना वाजिब है, जितना नमाज़ पढ़ने के लिए आवश्यक है। कोई परेशानी न हो तो बच्चे की शिक्षा का आरंभ क़ुरआन के हिफ़्ज़ से करना चाहिए। सुन्नत यह है कि सप्ताह में एक बार पूरे क़ुरआन को पढ़ लिया जाए, बल्कि कभी-कभी उससे कम समय में भी पढ़ लेना चाहिए। यदि भूल जाने का डर हो, तो उसको पढ़ने में विलंब करना हराम है। क़ुरआन पढ़ने से पहले आदमी "أعوذ بالله مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ " पढ़ेगा और पूरी निष्ठा से पढ़ने का प्रयास करेगा। जाड़े के दिनों में रात के प्रथम भाग में क़ुरआन ख़त्म पढ़ेगा और गर्मी के दिनों में दिन के प्रथम भाग में ख़त्म करेगा। तलहा बिन मुसर्रिफ़ कहते हैं : मैंने इस उम्मत के सर्वोत्तम लोगों का ज़माना पाया है जो क़ुरआन को पढ़कर ख़त्म करने की इस पद्धति को मुस्तहब मानते और कहा करते थे : जो कोई दिन के पहले भाग में क़ुरआन ख़त्म करता है, फ़रिश्ते उसके लिए

शाम तक अल्लाह से क्षमायाचना करते रहते हैं और जो रात के पहले हिस्से में ख़त्म करता है, फ़रिश्ते उसके लिए भोर तक अल्लाह से क्षमायाचना करते रहते हैं। इसे दारिमी ने सा'द बिन अबी वक़्क़ास से रिवायत किया है और इसकी सनद हसन है। क़ुरआन मधुर आवाज़ में और ठहर-ठहरकर पढ़ेगा। उसे दुख तथा चिंतन के साथ पढ़ेगा। रहमत वाली आयत पर पहुँचने पर अल्लाह से उसकी रहमत माँगेगा और अज़ाब का वर्णन करने वाली आयतों को पढ़ते हुए, अल्लाह की उसके अज़ाब से पनाह माँगेगा। नमाज़ियों, सो रहे लोगों या तिलावत में व्यस्त लोगों के पास इतनी ऊँची आवाज़ में क़ुरआन नहीं पढ़ेगा कि उन्हें कष्ट हो। क़ुरआन को खड़े होकर, बैठकर, लेटकर, सवारी पर और चलते हुए पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है। रास्ते में और छोटी नापाकी के साथ क़ुरआन पढ़ने में कोई हर्ज नहीं है, लेकिन गंदी जगहों पर पढ़ना मकरूह है। किसी क़ुरआन पढ़ने वाले के पास जमा होकर उसके क़ुरआन-पाठ को सुनना भी मुस्तहब है, तथा उसके पास बैठकर बेफ़ायदे की बातें करना सही नहीं है। इमाम अहमद ने जल्दी-जल्दी और राग के साथ क़ुरआन पढ़ने को नापसंद किया है। परंतु तरजीअ् (क़ुरआन पढ़ते समय मद वाला अक्षर आने पर कंठ में आवाज़ को बार-बार दोहराना) मकरूह नहीं है। याद रहे कि जिसने क़ुरआन की व्याख्या अपनी राय के अनुसार की या ऐसी बात कही, जो उसे मालूम न हो, तो उसे अपना स्थान जहन्नम में बना लेना चाहिए और उसने गलती की है, भले ही वह सही हो।

नापाक व्यक्ति के लिए क़ुरआन को छूना जायज़ नहीं है। हाँ, वह किसी वस्तु से लटकाकर उठा सकता है, या ऐसे थैले में रखकर उठा सकता है जिसमें अन्य सामान रखे हों। इसी तरह आस्तीन में रखकर भी उठा सकता है। वह लकड़ी आदि के माध्यम से भी उसके पृष्ठ उलट सकता है और तफ़सीर की किताबों और ऐसी किताबों को भी छू सकता है, जिनमें क़ुरआन की आयतें लिखी हों। इसी प्रकार, नापाक व्यक्ति के लिए बिना छुए क़ुरआन को लिखना भी जायज़ है। आदमी क़ुरआन लिखने का पारिश्रमिक ले सकता है। उसे रेशम का आवरण पहना सकता है। क़ुरआन की प्रति को अपने पीछे रखना या उसकी तरफ पैर फैलाना और इस जैसा हर वह कृत्य करना जायज़ नहीं है, जिससे क़ुरआन के सम्मान का हनन होता हो। क़ुरआन को सोने या चाँदी से सुशोभित करना और उसके दशमांशों, सूरतों के नामों, आयतों की संख्याओं या ऐसी किसी भी चीज़ को उसके अंदर लिखना मकरूह है, जो सहाबा -रज़ियल्लाहु अन्हुम- के ज़माने में नहीं थी।

क़ुरआन या किसी ऐसी चीज़ को, जिसमें अल्लाह का नाम हो, नापाक चीज़ से या नापाक चीज़ पर लिखना हराम है। यदि ऐसा कर दिया गया, तो उसे मिटाना ज़रूरी होगा। अगर क़ुरआन की प्रति बहुत पुरानी हो गई हो या उसके अक्षर मिट गए हों, तो उसे दफ़न कर देना होगा, क्योंकि उसमान - रज़ियल्लाहु

अन्हु - ने क़ुरआन की प्रतियों को अल्लाह के रसूल - सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम - की क़ब्र और मिंबर के दरमियान दफ़ना दिया था।

आम नफ़्ल नमाज़ें, मना किए हुए समयों के सिवाय, किसी भी समय पढ़ी जा सकती हैं। रात की नमाज़ (तहज्जुद) की बड़ी प्रेरणा दी गई है और यह दिन की नमाज़ से उत्तम है। तहज्जुद सोकर उठने के बाद पढ़ना ज़्यादा उत्तम है, क्योंकि "नाशिआ" शब्द, जिसका प्रयोग क़ुरआन में इस नमाज़ के लिए हुआ है, इसी अर्थ को दर्शाता है। आदमी जब नींद से जागे, तो सबसे पहले अल्लाह को याद करे और फिर जो दुआएँ साबित हैं, उनको पढ़े। उनमें से एक दुआ यह है :

" لا إله إلا الله وحده لا شريك له له الملك وله الحمد وهو على كل شيء قدير، الحمد لله وسبحان الله ولا إله إلا الله والله أكبر ولا حول ولا قوة إلا بالله "

(अल्लाह के सिवा कोई सत्य पूज्य नहीं है, वह अकेला है, उसका कोई साझी नहीं है, पूर्ण स्वामित्व बस उसी को प्राप्त है, सारी प्रशंसा उसी के लिए है और वह हर चीज़ करने में सक्षम है। समस्त प्रशंसाएँ अल्लाह के लिए हैं, अल्लाह पाक है, और अल्लाह के सिवा कोई भी सत्य पूज्य नहीं है, अल्लाह

सबसे बड़ा है,और नेकी करने की शक्ति और बुराई से बचने की ताक़त महान एवं सर्वशक्तिमान अल्लाह की सहयाता के बिना संभव नहीं है।) इस दुआ के बाद यदि कहे : "اللهم اغفر لي" (ऐ अल्लाह! मुझे क्षमा कर दे) या कोई और दुआ करे, तो उसकी दुआ क़बूल कर ली जाएगी। फिर यदि वुज़ू करके नमाज़ पढ़े तो उसकी नमाज़ क़बूल कर ली जाएगी। फिर उसे यह दुआ पढ़नी चाहिए:

"الحمد لله الذي أحياني بعد ما أماتني وإليه النشور، لا إله إلا أنت وحدك لا شريك لك، سبحانك أستغفرك لذنبي وأسألك رحمتك"

(समस्त प्रशंसाएँ उस अल्लाह के लिए हैं जिसने मुझे मारने के बाद ज़िंदा कर दिया, और उसी की तरफ दोबारा ज़िंदा होकर जाना है। तेरे सिवा कोई सत्य पूज्य नहीं है, तू अकेला है, तेरा कोई साझी नहीं, तू पाक है, मैं तुझसे अपने गुनाहों की माफी चाहता हूँ और तेरी रहमत का सवाली हूँ।)

"اللهم زدني علماً ولا تزغ قلبي بعد إذ هديتني وهب لي من لدنك رحمة إنك أنت الوهاب. الحمد لله الذي ردّ علي روحي وعافاني في جسدي وأذن لي بذكره"

(ऐ अल्लाह! मेरे ज्ञान में वृद्धि कर दे, मुझे हिदायत देने के बाद मेरे दिल को टेढ़ा मत कर, और अपनी तरफ से मुझे अपनी रहमत प्रदान कर, बेशक तू

हद से ज्यादा प्रदान करने वाला है। समस्त प्रशंसाएँ उस अल्लाह के लिए हैं जिसने मेरी आत्मा मुझे लौटा दी, मेरे शरीर को रोगमुक्त रखा और स्वयं को याद करने की अनुमति दी।) फिर मिसवाक करे और जब नमाज़ में खड़ा हो, तो चाहे तो नमाज़ शुरू करने की वही दुआ पढ़े जो फ़र्ज़ नमाज़ शुरू करते हुए पढ़ी जाती है, और यदि चाहे तो कोई दूसरी दुआ-ए-इस्तिफ़ताह पढ़ ले। जैसे यह दुआ :

"اللهم لك الحمد أنت نور السموات والأرض ومن فيهن ولك الحمد أنت قيوم السموات والأرض ومن فيهن ولك الحمد أنت ملك السموات والأرض ومن فيهن ولك الحمد أنت الحق ووعدك الحق وقولك الحق ولقاؤك حق والجنة حق والنار حق والنبيون حق والساعة حق، اللهم لك أسلمت وبك آمنت وعليك توكلت وإليك أنبت وبك خاصمت وإليك حاكمت فاغفر لي ما قدمت وما أخرت وما أسررت وما أعلنت وما أنت أعلم به مني أنت المقدِّم وأنت المؤخر لا إله إلا أنت ولا قوة إلا بك "

(ऐ अल्लाह! सारी प्रशंसा तेरे ही लिए है, तू आकाशों तथा धरती और उनके दरमियान जो कुछ है सबका प्रकाश है। सारी प्रशंसाएँ तेरे ही लिए हैं, आकाशों तथा धरती और उनमें मौजूद सारी चीज़ों को थाम कर रखने वाला तू ही है। सारी प्रशंसाएँ तेरे ही लिए हैं, तू आकाशों तथा धरती और उनमें मौजूद

सारी चीज़ों का स्वामी है। सारी प्रशंसाएँ तेरे ही लिए हैं, तू सत्य है। तेरी बात सत्य है। तेरा वचन सत्य है। तुझसे मिलना सत्य है। जन्नत सत्य है। जहन्नम सत्य है। सारे नबी एवं रसूल सत्य हैं और क़ियामत सत्य है। ऐ अल्लाह! मैंने अपने आपको तेरे ही सामने समर्पित कर दिया, तुझी पर ईमान लाया, तेरी ही तरफ लौट आया, तुझी पर भरोसा किया, तेरी ही मदद से अपने शत्रुओं से झगड़ा किया, और तेरे ही पास अपना मामला फैसला के लिए ले गया। अतः मेरे उन सारे गुनाहों को क्षमा कर दे, जो मैं पहले कर चुका हूँ और जो बाद में मुझसे हो सकते हैं, और जो मैंने गुप्त रूप से किया है और जो मैंने खुलेआम किया है, और जिनको तू मुझसे अधिक जानता है। तू ही आगे करने वाला और तू ही पीछे रखने वाला है, तेरे सिवा कोई सत्य पूज्य नहीं और तेरे सहारे के बिना किसी कार्य की शक्ति नहीं है।) और अगर चाहे तो यह दुआ पढ़े :

" اللهم رب جبريل وميكائيل وإسرافيل فاطر السموات والأرض عالم الغيب والشهادة أنت تحكم بين عبادك فيما كانوا فيه يختلفون اهدني لما اختلف فيه من الحق بإذنك إنك تهدي من تشاء إلى صراط مستقيم "

(ऐ अल्लाह, ऐ जिबरील, मीकाईल तथा इसराफ़ील के रब! आकाश तथा धरती को बनाने वाले, हाज़िर और ग़ायब का इल्म रखने वाले! तू ही अपने

बंदों के मतभेदों का निर्णय करने वाला है। मुझे तू अपनी अनुमति से जिसके विषय में मतभेद हो गया है, उसमें सत्य का मार्गदर्शन कर, क्योंकि तू जिसे चाहता है उसे सही रास्ते का मार्गदर्शन करता है।)

अपने तहज्जुद को दो हल्की रकअतों से शुरू करना सुन्नत है और यह कि उसकी एक नफ़्ल नमाज़ हो, जिसे उसे नियमित रूप से पढ़ना चाहिए, और यदि किसी कारणवश वह छूट जाए, तो उसको बाद में अदा कर ले।

सुबह और शाम के वक्त, सोने और जागने के वक्त और घर में प्रवेश करने और घर से निकलने आदि के लिए जो दुआएँ आई हैं, उनको पढ़ना मुस्तहब है। नफ़्ल नमाज़ घर में और जिन नफ़्ल नमाजों को जमाअत के साथ पढ़ने का प्रावधान नहीं है, उनको गुप्त रूप से पढ़ना उत्तम है। वैसे आदत न बना लिया जाए, तो नफ़्ल नमाज़ों को जमाअत के साथ अदा करने में कोई हर्ज नहीं है। प्रातः काल में अपने गुनाहों की माफी बहुत अधिक माँगना भी मुस्तहब है। जिसकी तहज्जुद की नमाज़ छूट जाए, वह ज़ुहर से पहले उसे अदा कर ले। लेट कर नफ़्ल नमाज़ अदा करना सही नहीं है।

चाश्त की नमाज़ सुन्नत है और उसकी अदायगी का समय, निषिद्ध समय के गुज़रने के बाद से लेकर सूरज के ढलने से थोड़ी देर पहले तक है। जब सूरज बहुत गर्म हो जाए, उस समय उसे पढ़ना अधिक उत्तम है। उसकी असल संख्या दो रक्अत है, परंतु अगर उससे अधिक पढ़े तो और अच्छा है।

जब कोई काम करना हो, तो इस्तिखारा की नमाज़ सुन्नत है। वह फ़र्ज़ नमाज़ के अतिरिक्त दो रक्अत नमाज़ पढ़े और फिर यह दुआ पढ़े :

" اللهم إني أستخيرك بعلمك وأستقدرك بقدرتك وأسألك من فضلك العظيم فإنك تقدر ولا أقدر وتعلم ولا أعلم وأنت علام الغيوب، اللهم إن كنت تعلم أن هذا الأمر - ويسميه بعينه - خير لي في ديني ودنياي ومعاشي وعاقبة أمري (عاجله وآجله) فاقدره لي ويسره لي ثم بارك لي فيه وإن كنت تعلم أن هذا الأمر شر لي في ديني ودنياي ومعاشي وعاقبة أمري فاصرفه عني واصرفني عنه واقدر لي الخير حيث كان ثم رضني به "

(ऐ अल्लाह! मैं तेरे ज्ञान के द्वारा भलाई का प्रार्थी हूँ, और तेरी शक्ति के माध्यम से शक्ति माँगता हूँ, और तेरी महान कृपा माँगता हूँ। क्योंकि तेरे पास शक्ति है और मेरे पास कोई शक्ति नहीं है, तथा तू जानता है और मैं नहीं जानता, और तू ही सब परोक्ष की बातों को ख़ूब जानने वाला है। ऐ अल्लाह! अगर तू जानता है कि यह काम (यहाँ पर उस विशेष काम का नाम ले, जो वह करना चाहता है) मेरे लिए मेरे धर्म, मेरी दुनिया, मेरे जीवन और मेरे काम के परिणाम के रूप में (या दुनिया और आख़िरत के एतिबार से) अच्छा है, तो इस काम को मेरे लिए नियति बना दे और इसे मेरे लिए आसान कर दे, और फिर उसमें मेरे लिए बरकत डाल दे। और यदि तू जानता है कि यह काम मेरे लिए, मेरे धर्म, मेरी दुनिया, मेरे जीवन और मेरे अंजाम के लिए बुरा है, तो

इसे मुझसे से दूर कर दे और मुझे भी इससे दूर कर दे, और मेरे लिए भलाई को नियत कर दे, चाहे वह जहाँ भी हो, फिर मुझे उससे सन्तुष्ट कर दे।) फिर उसके बारे में अनुभवी लोगों से परामर्श ले। इस्तिख़ारा करते वक्त, मनोनीत काम को करने या न करने का संकल्प नहीं होना चाहिए।

तहिय्यतुल मस्जिद की नमाज़, वुज़ू की सुन्नत और मग़्रिब तथा इशा की मध्यावधि की नमाज़ सुन्नत है। जबकि सजदा-ए-तिलावत सुन्नत-ए-मुअक्कदा है, वाजिब नहीं, जैसा कि उमर -रज़ियल्लाहु अनहु- के कथन से मालूम होता है। वह कहते हैं : "जिसने सजदा किया, वह पुण्य का भागीदार हुआ और जिसने नहीं किया, उसपर कोई गुनाह नहीं।" इसे इमाम मालिक ने अपनी मुवत्ता में रिवायत किया है। जो क़ुरआन का पाठ सुन रहा हो, उसके लिए भी सजदा करना सुन्नत है। जो सवारी पर हो, वह इशारे से सजदा करेगा, चाहे उसका चेहरा जिधर भी हो और जो पैदल चल रहा हो, वह क़िबले की तरफ मुँह करके ज़मीन पर सजदा करेगा। जो बिना इरादे के सुन ले, वह सजदा नहीं करेगा। सहाबा से इस आशय के कई आसार नक़ल किए गए हैं। इब्ने मसऊद -रज़ियल्लाहु अन्हु- ने क़ुरआन पढ़ रहे एक बालक से कहा कि सजदा करो, क्योंकि तुम हमारे इमाम हो।

किसी आम अथवा खास नेमत की प्राप्ति पर सजदा-ए-शुक्र करना मुस्तहब है। जब कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को उसके धर्म या उसके शरीर के मामले में पीड़ित देखे, तो यह दुआ पढ़े :

" الحمد لله الذي عافاني مما ابتلاك به وفضلني على كثير ممن خلق تفضيلا"

(समस्त प्रशंसाएँ उस अल्लाह के लिए हैं जिसने मुझे उस चीज़ से सुरक्षित रखा, जिससे तुम्हें पीड़ित किया और उसने अपनी बहुत-सी सृष्टियों पर मुझे वरीयता प्रदान की।)

जिन समयों में नमाज़ पढ़ने की मनाही है, वे पाँच हैं : फ़ज्र की नमाज़ के बाद से सूर्योदय तक, सूर्योदय से लेकर उसके एक भाले के बराबर ऊँचा हो जाने तक, सूरज के बीच आकाश में होने से लेकर उसके ढल जाने तक, अ़स्र की नमाज़ के बाद से लेकर सूर्यास्त के थोड़ी देर पहले तक और उसके बाद सूर्यास्त तक। परंतु इन समयों में जो फ़र्ज़ नमाजें छूट गई हों, उनको अदा करना, मन्नतें पूरी करना, परिक्रमा (तवाफ़) की दो रक्अत पढ़ना और अगर कोई मस्जिद में हो और जमाअत खड़ी हो जाए तो जमाअत को लौटाना जायज़ है। जनाज़े की नमाज़ भी इनमें से दो लंबे समयों में (यानी फ़ज्र की नमाज़ के बाद से सूर्योदय तक और अस्र की नमाज़ के बाद से सूर्यास्त तक) पढ़ी जा सकती है।

(अध्याय: जमाअत की नमाज़ का बयान)

जुमा और ईद के अतिरिक्त अन्य नमाज़ों की जमाअत के लिए कम से कम दो व्यक्ति की आवश्यकता होती है। जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ना प्रत्येक व्यक्ति पर अनिवार्य है, चाहे वह घर में हो या सफ़र में। बल्कि भय की हालत में भी जमाअत वाजिब है, क्योंकि अल्लाह तआला का फरमान है : "तथा (ऐ नबी!) जब आप (युद्ध के मैदान में) उनके साथ मौजूद हों और उनके लिए नमाज़ क़ायम करें, तो उनका एक गिरोह आपके साथ खड़ा हो जाए और वे अपने हथियार लिए रहें और जब वे सज्दा कर लें, तो तुम्हारे पीछे हो जाएँ तथा दूसरा गिरोह आए, जिसने नमाज़ नहीं पढ़ी है और वे तुम्हारे साथ नमाज़ पढ़ें और अपने हथियार लिए सावधान रहें।" जमाअत के साथ पढ़ी गई नमाज़, अकेले पढ़ी गई नमाज़ से पुण्य के हिसाब से 27 गुना बढ़ी हुई है। जमाअत मस्जिद में क़ायम होगी। अधिक पुरानी मस्जिद में नमाज़ पढ़ना अधिक उत्तम है। इसी तरह अधिक बड़ी जमाअत वाली तथा अधिक दूर की मस्जिद में नमाज़ पढ़ने में अधिक सवाब है। किसी मस्जिद में उसके इमाम की अनुमति के बिना इमामत के लिए आगे बढ़ जाना सही नहीं है। हाँ, अगर वह जमाअत खड़ी होने के निर्धारित समय पर न पहुँचे, तो इमामत की जा सकती है, क्योंकि अबू बक्र और अब्दुर्रहमान बिन औफ़ -रज़ियल्लाहु अन्हुमा- से ऐसा करना साबित है। जब जमाअत खड़ी हो जाए, तो नफ़्ल नमाज़ शुरू करना जायज़ नहीं है और अगर ऐसा हो कि कोई नफ़्ल पढ़ रहा हो और जमाअत खड़ी हो जाए, तो उसे हल्के अंदाज़ में पूरा कर लेगा। जिसको इमाम के साथ एक रकूअत मिल गई, उसे जमाअत में शरीक होने

का सवाब मिल जाएगा और जिसने इमाम को रुकू में पा लिया, उसे वह रक्अत मिल गई। रुकू की तकबीर, एहराम की तकबीर की ओर से काफ़ी होगी, क्योंकि ज़ैद बिन साबित और अब्दुल्लाह बिन उमर -रज़ियल्लाहु अन्हुम- से ऐसा करना साबित है और किसी सहाबी की तरफ से इस मामले में उनका विरोध भी साबित नहीं है। लेकिन, जो व्यक्ति इन दोनों तकबीरों को वाजिब कहने वालों के मतभेद से दामन बचाना चाहे, उसके लिए दोनों तकबीरों को कह लेना उत्तम है। यदि किसी ने इमाम को रुकू के बाद पाया, तो उसकी वह रक्अत शुमार नहीं होगी, लेकिन वह इमाम के साथ शामिल हो जाएगा। सुन्नत यह है कि आदमी इमाम को जिस अवस्था में पाए, उसी अवस्था में उसके साथ शरीक हो जाए। इस विषय में अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- की एक हदीस मौजूद है। मसबूक़ (ऐसा व्यक्ति जो इमाम के साथ शुरू से शरीक न हुआ हो और उसकी एक या उससे अधिक रक्अत छूट गई हो) इमाम के दूसरे सलाम फेर लेने के बाद ही छूटी हुई नमाज़ को पूरा करने के लिए खड़ा होगा। अगर कोई इमाम को सलाम फेरने के बाद किए जाने वाले सजदा-ए-सह्व में पाए, तो वह उसके साथ नमाज़ में शामिल नहीं होगा। यदि किसी की जमाअत छूट जाए, तो मुस्तहब यह है कि कोई उसके साथ नमाज़ पढ़ ले, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का कथन है : "कोई है, जो इस व्यक्ति के साथ नमाज़ पढ़कर इसपर सदक़ा करे?" मुक़तदी पर क़िराअत करना वाजिब नहीं है, क्योंकि अल्लाह तआला का फरमान है : "और जब क़ुरआन पढ़ा जाए, तो उसे ध्यानपूर्वक सुनो तथा मौन साध लो। शायद कि तुमपर दया की जाए।"

इमाम अहमद ने कहा है कि इस बात पर सबका मतैक्य है कि यह आयत नमाज़ के बारे में उतरी है। अल्बत्ता, जिन नमाज़ों में इमाम ऊँची आवाज़ में क़ुरआन का पाठ नहीं करता, उनमें मुक़तदी का क़ुरआन पढ़ना सुन्नत है। अधिकांश विद्वान सहाबा और ताबेईन की राय है कि जिन नमाज़ों में इमाम ऊँची आवाज़ में क़ुरआन नहीं पढ़ाता, उनमें मुक़तदी इमाम के पीछे क़ुरआन पढ़ेगा, ताकि उन लोगों के मतभेद से दामन बचाया जा सके, जो उसे वाजिब कहते हैं। लेकिन, हमने जहरी नमाज़ों में क़ुरआन न पढ़ने की बात इसलिए की है, क्योंकि इसके प्रमाण मौजूद हैं। मुक़तदी, नमाज़ के सारे कार्य इमाम के बाद, उससे पिछड़े बिना, शुरू करेगा। अगर उसने इमाम के साथ ही किया, तो यह मकरूह है। रही बात इमाम से आगे बढ़ने की, तो यह हराम है। यदि कोई भूले से, इमाम से पहले रुकू या सजदे में चला गया, तो उसे वापस जाकर इमाम के साथ करना होगा। लेकिन अगर जान-बूझकर ऐसा किया, तो उसकी नमाज़ बातिल हो जाएगी। यदि बिना किसी मान्य कारण के, इमाम से नमाज़ का एक स्तंभ पिछड़ गया, तो इमाम से आगे बढ़ने वाले की तरह उसकी भी नमाज़ बातिल हो जाएगी। हाँ, यदि नींद, सुस्ती या इमाम की जल्दबाजी के कारण ऐसा हो गया, तो उसे अदा करने के बाद इमाम के साथ मिल जाएगा। यदि किसी कारण से एक रक्अत पिछड़ गया, तो इमाम के साथ नमाज़ पढ़ता रहेगा और इमाम के सलाम फेरने के बाद छूटी हुई रक्अत को पूरा कर लेगा। इमाम के लिए सुन्नत है कि यदि किसी मुक़तदी को नमाज़ में कोई ऐसी परेशानी आ जाए, जिसके कारण उसका नमाज से निकलना जरूरी हो, तो वह नमाज़ को हल्का कर दे, लेकिन इतनी भी जल्दबाजी न करे कि

मुक़तदियों को बहुत सी सुन्नतें छोड़ देनी पड़ें। इमाम का ऐसा करना मकरूह समझा जाएगा।

पहली रक्अत में दूसरी रक्अत की तुलना में अधिक क़ुरआन पढ़ना सुन्नत है। इमाम के लिए मुस्तहब है कि यदि अन्य मुकतदियों पर भारी न गुज़रे, तो वह नमाज़ में बाद में प्रवेश करने वाले की इतनी प्रतीक्षा करे कि उसे रक्अत मिल जाए।

लोगों में इमामत का सबसे ज़्यादा हकदार वह है, जो अल्लाह की किताब को सबसे अच्छा पढ़ता हो। रहा यह प्रश्न कि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने अबू बक्र -रज़ियल्लाहु अन्हु- को इमामत के लिए उबय बिन का'ब और मुआज़ बिन जबल -रज़ियल्लाहु अन्हुमा- पर वरीयता क्यों दी, जबकि यह दोनों अबू बक्र -रज़ियल्लाहु अन्हु- से क़ुरआन अधिक अच्छा पढ़ते थे? तो इसका उत्तर इमाम अहमद ने यह दिया है कि आपने ऐसा इसलिए किया, ताकि लोग समझ जाएँ कि अबू बक्र -रज़ियल्लाहु अन्हु- इमामत-ए- कुबरा (सबसे बड़ी इमामत) के सबसे अधिक हक़दार हैं। जबकि अन्य लोगों ने इसका जवाब यह दिया है कि जब अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने उनको इमामत के लिए आगे बढ़ा दिया, जबकि आप ही का फ़रमान है कि लोगों की इमामत का सबसे अधिक हकदार वह है, जो अल्लाह की किताब का सबसे अच्छा क़ारी हो और अगर क़ुरआन

अच्छा पढ़ने के मामले में सब बराबर हों, तो हकदार वह है, जो सुन्नत का सबसे बड़ा ज्ञाता है, तो इससे यह सिद्ध हो गया कि अबू बक्र -रज़ियल्लाहु अन्हु- सहाबा में क़ुरआन के सबसे अच्छे क़ारी और सुन्नत के सबसे बड़े जानकार थे। इसलिए भी, क्योंकि क़ुरआन का ज्ञान प्राप्त करने के मामले में सहाबा का तरीका यह था कि वे जितना पढ़ते, उसका पूरा अर्थ मालूम कर लेने और उसपर अमल कर लेने से पहले आगे नहीं बढ़ते थे, जैसा कि अब्दुल्लाह बिन मसऊद -रज़ियल्लाहु अन्हु- ने कहा है कि हममें कोई भी व्यक्ति जब क़ुरआन की दस आयतें पढ़ लेता, तो उस वक्त तक आगे नहीं बढ़ता, जब तक उनके मायने-मतलब अच्छी तरह से न जान लेता और उनपर अमल न कर लेता। मुस्लिम ने अबू मसऊद बदरी -रज़ियल्लाहु अन्हु- से मरफ़ूअन रिवायत किया है : "लोगों की इमामत वह शख़्स करेगा जो उनमें सबसे अच्छा क़ुरआन पढ़ने वाला हो, यदि इसमें सब बराबर हों तो वह व्यक्ति इमामत करेगा जो सबसे अधिक सुन्नत का ज्ञान रखता हो, यदि इसमें भी सब बराबर हों तो वह इमामत करेगा जिसने सबसे पहले हिजरत की थी, और यदि इसमें भी सब बराबर हों तो इमाम वह बनेगा जो आयु में सबसे बड़ा हो।"

कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के आधिपत्य-क्षेत्र में उसकी अनुमति के बिना कदापि इमामत ना कराए और न किसी के घर में उसकी अनुमति के बिना उसके विशेष स्थान पर बैठे। बुख़ारी एवं मुस्लिम में आया है : "तुम्हारी इमामत

वह व्यक्ति करेगा जो आयु में तुम सबसे बड़ा है।" अबू मसऊद -रज़ियल्लाहु अनहु- से वर्णित हदीस की एक रिवायत के शब्द हैं : "यदि हिजरत में भी सब बराबर हों तो सबसे पहले इस्लाम लाने वाला इमामत करेगा।"

जो पारिश्रमिक लेकर नमाज़ पढ़ाए, उसके पीछे नमाज़ नहीं पढ़ी जाएगी। अबू दाऊद कहते हैं कि इमाम अहमद से एक ऐसे व्यक्ति के बारे में पूछा गया, जो कहता था कि मैं रमज़ान में इतने पारिश्रमिक पर तुम्हें नमाज़ पढ़ाऊँगा, तो उन्होंने कहा : मैं अल्लाह से आफ़ियत तलब करता हूँ। भला उसके पीछे नमाज़ कौन पढ़ेगा?! क़बीले के इमाम यानी किसी मस्जिद के निर्धारित इमाम के अतिरिक्त, किसी ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ नहीं पढ़ी जाएगी जो खड़ा होने में सक्षम न हो। लेकिन जब किसी मस्जिद का निर्धारित इमाम खड़े होने में सक्षम न हो, तो सब लोग उसके पीछे बैठकर नमाज़ पढ़ेंगे। यदि इमाम अनजाने में नापाकी की हालत में या शरीर पर गंदगी लगी होने के बावजूद नमाज़ पढ़ा दे तथा उसे नमाज़ संपन्न कर लेने के बाद ही इसका पता चले, तो मुक़्तदी नमाज़ नहीं दोहराएँगे। हाँ, नापाकी की स्थिति में पढ़ी हुई नमाज़ केवल इमाम दोहराएगा। यदि किसी इमाम को अधिकांश लोग नापसंद करते हों और उसका कोई उचित कारण भी हो, तो उसका इमाम बनकर नमाज़ पढ़ाना मकरूह है। यहाँ यह भी बता दें कि तयम्मुम से नमाज़ पढ़ने वाला, वुज़ू करके नमाज़ पढ़ने वाले की इमामत कर सकता है।

सुन्नत यह है कि मुक़तदी इमाम के पीछे खड़े होंगे, क्योंकि जाबिर और जब्बार की हदीस में है कि जब दोनों आपके दाएँ-बाएँ खड़े हो गए, तो आपने दोनों के हाथ पकड़कर उनको अपने पीछे खड़ा कर दिया। इसे मुस्लिम ने रिवायत किया है। रही बात अब्दुल्लाह बिन मसऊद -रज़ियल्लाहु अन्हु- के अलक़मा और असवद के बीच में खड़े होकर दोनों को नमाज़ पढ़ाने की, तो इब्ने सीरीन ने इसका उत्तर यह दिया है कि जगह तंग थी। यदि मुक़तदी केवल एक हो तो वह इमाम की दाएँ तरफ खड़ा होगा। अगर वह बाएँ तरफ खड़ा हो गया तो इमाम उसे खींचकर अपनी दाएँ तरफ खड़ा कर लेगा। ऐसा करने पर उसकी तकबीर-ए-तहरीमा बातिल नहीं होगी। लेकिन यदि मुक़तदी एक पुरुष और एक महिला हो, तो पुरुष इमाम की दाएँ तरफ खड़ा होगा और महिला इमाम के पीछे खड़ी होगी। इसका प्रमाण अनस -रज़ियल्लाहु अन्हु- की एक हदीस है, जिसे इमाम मुस्लिम ने रिवायत किया है। उत्तम यह है कि पहली क़तार इमाम से सटी हुई हो और इसी तरह बाद की क़तारें भी एक-दूसरी से सटी हुई हों एवं इमाम बीचों-बीच खड़ा हो, क्योंकि प्यारे नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का कथन है : "इमाम को बीच में खड़ा करो और खाली जगहों को भर दो।" अनस -रज़ियल्लाहु अन्हु- से वर्णित एक हदीस के अनुसार, जिसमें आया है कि मैं और एक अनाथ बालक अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- के पीछे खड़े हो गए और बुढ़िया हमारे पीछे खड़ी हो गई, बच्चे के

साथ मिलकर सफ़ बनाना सही है। यदि किसी ने सफ में अकेले नमाज़ पढ़ ली, तो उसकी नमाज़ सही नहीं होगी। अगर मुक़तदी, इमाम को या उसके पीछे नमाज़ पढ़ने वाले अन्य मुक़तदियों को देख रहा हो, तो उसकी इक़्तिदा सही है। सफ़ें मिली हुई न भी हों, तो भी कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। इसी तरह यदि देख तो न रहा हो, लेकिन तकबीर सुन रहा हो, तब भी इक़्तिदा सही है। क्योंकि जैसे देखकर इक़्तिदा संभव है, उसी तरह तकबीर सुनकर भी इक़्तिदा संभव है। लेकिन यदि दोनों के दरमियान कोई रास्ता पड़ता हो और सफों का सिलसिला टूट जाए, तो इक़्तिदा सही नहीं होगी। लेकिन, अल-मुवफ़्फ़क़ आदि के अनुसार यहाँ भी इक़्तिदा सही होगी, क्योंकि सही न होने के संबंध में न कोई नस्स (क़ुरआनी आयत या हदीस, जो प्रमाण का काम दे सके) है और न इस मसले में उलमा का मतैक्य है।

इमाम का मुक़तदियों से ऊँचे स्थान पर खड़ा होना मकरूह है। इब्ने मसऊद -रज़ियल्लाहु अन्हु- ने हुज़ैफ़ा -रज़ियल्लाहु अन्हु- से कहा कि क्या आपको नहीं मालूम कि सहाबा इससे मना करते थे? हुज़ैफ़ा -रज़ियल्लाहु अन्हु- ने कहा : क्यों नहीं, यक़ीनन मालूम है। इमाम शाफ़िई ने इसे विश्वसनीय वर्णनकर्ताओं की सनद से रिवायत किया है। लेकिन थोड़ा-बहुत, मसलन मिंबर के एक पायदान के बराबर ऊँचे स्थान पर हो, तो कोई हर्ज नहीं है, क्योंकि सह्ल -रज़ियल्लाहु अनहु- से वर्णित हदीस में आया है कि अल्लाह के नबी -

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- मिंबर पर नमाज़ पढ़ाने लगे, फिर पीछे हटे और मिंबर से नीचे उतरकर सजदा किया। इसके विपरीत यदि मुक़तदी इमाम से ज़्यादा ऊँची जगह पर खड़ा हो, तो कोई हर्ज नहीं है, क्योंकि अबू हुरैरा -रज़ियल्लाहु अनहु- ने मस्जिद की छत पर खड़े होकर नीचे नमाज़ पढ़ा रहे इमाम की इक़तिदा में नमाज़ पढ़ी है। इसे इमाम शाफ़ेई ने रिवायत किया है। इमाम का फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ने के बाद उसी जगह पर नफ़्ल नमाज़ पढ़ना मकरूह है। क्योंकि इस संबंध में मुगीरा -रज़ियल्लाहु अन्हु- की एक मरफ़ू' हदीस मौजूद है, जिसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है। लेकिन इमाम अहमद कहते हैं कि मेरी जानकारी के अनुसार अली -रज़ियल्लाहु अन्हु- के अतिरिक्त किसी ने इसे नापसंद नहीं किया है। मुक़तदी इमाम से पहले सलाम नहीं फेरेगा, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फ़रमान है : "तुम लोग रुकू', सजदा और सलाम फेरने के मामले में मुझसे आगे मत बढ़ो।" इमाम के सिवा किसी और के लिए उचित नहीं है कि वह फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ने के लिए मस्जिद में किसी स्थान को खास कर ले, क्योंकि प्यारे नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने ऊँट की भांति, किसी स्थान-विशेष को खास कर लेने से मना किया है।

रोगी, ऐसा व्यक्ति जिसे अपने माल की बर्बादी का डर हो या ऐसा व्यक्ति जो किसी के माल का प्रहरी हो, ये सारे लोग जुमा और जमाअत छोड़ दें तो

इनपर कोई गुनाह नहीं है, क्योंकि इनके जुमा और जमाअत के लिए आने से जो कठिनाई उत्पन्न होगी, वह बारिश में कपड़ा भीग जाने से अधिक है, जबकि उलमा का इस बात पर मतैक्य है कि बारिश जुमा तथा जमाअत में शरीक न होने का उचित कारण है। इसका आधार उमर -रज़ियल्लाहु अन्हु- का यह फ़रमान है : "यात्रा के दौरान ठंडी अथवा बरसाती रात में अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का ऐलान करने वाला ऐलान कर देता था कि तुम लोग अपने-अपने ठहरने के स्थानों में ही नमाज़ पढ़ लो।" इस हदीस को बुखारी और मुस्लिम ने रिवायत किया है। दोनों ने इब्ने अब्बास -रज़ियल्लाहु अनहुमा- से एक और रिवायत नक़ल की है, जिसमें आया है कि उन्होंने जुमा के दिन, जब बारिश हो रही थी, अपने अज़ान देने वाले से कहा : "तुम أشهد أن محمداً رسول الله कहने के बाद, حيَّ على الصلاة मत कहना, अपितु صلُّوا في بيوتكم (अपने घरों में नमाज़ पढ़ लो) कह देना।" उनकी इस बात से जब लोगों को कुछ आश्चर्य हुआ, तो फ़रमाया : "इस कार्य को उसने भी किया है, जो मुझसे बेहतर थे। -उनकी मुराद अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से थी।- मुझे अच्छा नहीं लगा कि मैं तुम्हें कीचड़ और फिसलन में घर से निकलने पर विवश करूँ।" जिसने लहसुन या प्याज़ खाई हो, उसका मस्जिद में आना मकरूह है, यद्यपि मस्जिद में कोई मनुष्य उपस्थित न हो, क्योंकि उसकी दुर्गंध से फ़रिश्तों को कष्ट होता है।

(अध्यायः उज़्र वाले लोगों की नमाज़ का बयान)

रोगी के लिए भी फ़र्ज़ नमाज़ खड़े होकर पढ़ना अनिवार्य है, क्योंकि इमरान -रज़ियल्लाहु अन्हु- की हीदस में है : "खड़े होकर नमाज़ पढ़ो, अगर इसकी क्षमता न हो तो बैठकर और अगर यह भी न हो सके तो पहलू के बल लेट कर नमाज़ अदा करो।" इसे बुख़ारी ने रिवायत किया है। नसाई में इन शब्दों का इज़ाफ़ा है : "यदि इसकी भी क्षमता न हो तो चित लेटकर पढ़ो।" लेटकर नमाज़ पढ़ते समय, रुकू और सजदे के लिए जहाँ तक हो सके अपने सिर से इशारा करेगा, क्योंकि प्यारे नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फ़रमान है : "जब मैं तुम्हें किसी बात का आदेश दूँ, तो तुम लोग जहाँ तक हो सके, उसे पूरा करो।"

यदि कीचड़ या बारिश से कष्ट पहुँचने का डर हो तो ठहरी हुई या चलती सवारी पर फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ना सही है। इसका प्रमाण याला बिन उमय्या -रज़ियल्लाहु अन्हु- से वर्णित वह हदीस है, जिसे इमाम तिरमिज़ी ने रिवायत किया है और कहा है कि इसपर विद्वानों का अमल रहा है।

यात्री, विशेष रूप से चार रक्अत वाली नमाज़ों का क़स्र (चार रक्अत वाली नमाज़ों को दो रक्अत पढ़ना) करेगा और रमज़ान महीने के रोज़े छोड़ देगा। लेकिन यदि किसी ऐसे इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ रहा हो, जिसे पूरी नमाज़ पढ़नी हो, तो वह भी पूरी नमाज़ पढ़ेगा। यदि कोई यात्री यात्रा के दौरान

किसी ज़रूरत के तहत, ठहरने का इरादा किए बिना और यह जाने बगैर कि कब तक ठहरना पड़ सकता है, कहीं रुक जाए या लगातार बारिश के कारण रुकना पड़ जाए या बीमारी की वजह से निकल न पा रहा हो, तो लगातार क़स्र करता रहेगा। यात्रा से संबंधित विधान चार हैं : क़स्र (चार रक्अत वाली नमाज़ों को दो रक्अत पढ़ना), दो वक़्त की नमाज़ों को एक साथ अदा करना, मसह करना और रोज़ा छोड़ना।

यात्री के लिए ज़ुहर और अस्र तथा मग़्रिब और इशा को दोनों में से किसी एक नमाज़ के वक्त पर एक साथ पढ़ लेना जायज़ है। लेकिन अरफ़ा और मुज़दलिफ़ा की नमाज़ों को छोड़ अन्य नमाज़ों को एक साथ न पढ़ना ही उत्तम है। इसी तरह यदि बीमार व्यक्ति को हर नमाज़ को उसके निर्धारित समय पर पढ़ने में कठिनाई हो, तो उसके लिए भी दो वक़्तों की नमाज़ों को एक साथ पढ़ना जायज़ है, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने बिना किसी डर और यात्रा के भी दो नमाज़ों को एक साथ पढ़ा है। इसी प्रकार, वह औरत जिसको इस्तिहाज़े का ख़ून आ रहा हो, जो एक प्रकार की बीमारी है, उसके लिए भी दो नमाज़ों को एक साथ पढ़ना साबित है। इमाम अहमद का कहना है कि बीमारी यात्रा से कहीं अधिक कठिन वस्तु है, इसलिए जब यात्रा में दो नमाज़ों को एक साथ पढ़ना जायज़ है, तो बीमारी में भी जायज़ होना चाहिए। वह कहते हैं : बिना यात्रा के भी किसी ज़रूरत या काम के तहत दो नमाज़ों को एक साथ अदा किया जा सकता है। इमाम अहमद फरमाते हैं : अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- से सलातुल-ख़ौफ़ (भय की नमाज़) को छ: या सात तरीक़ों से पढ़ना साबित है

और ये सारे तरीक़े जायज़ हैं। यह और बात है कि सह्ल -रज़ियल्लाहु अन्हु- की हदीस में जो तरीक़ा आया है, मैं उसी का चयन करता हूँ। यह दरअसल ज़ात अर-रिक़ा नामी युद्ध में पढ़ी गई भय की नमाज़ है, जो कुछ इस तरह से पढ़ी गई थी : "एक गिरोह ने आप -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- के साथ सफ़बंदी की, और दूसरा गिरोह दुश्मन के सामने मोर्चाबंद रहा। आप अपने साथ वाले गिरोह को एक रक्अत पढ़ाकर खड़े रहे और साथ वाले स्वयं शेष नमाज़ पूरी कर चले गए और मोर्चा संभाल लिया। फिर दूसरा गिरोह आया और आप शेष रह जाने वाली रक्अत उसके साथ पूरी कर बैठ रह गए, और जब उन्होंने शेष रह जाने वाली रक्अत स्वयं पूरी कर ली, तो आपने उनके साथ सलाम फेर दिया।" इसे बुखारी एवं मुस्लिम ने रिवायत किया है। हालाँकि इसकी भी अनुमति है कि इमाम हर गिरोह को दो-दो रक्अत पढ़ाकर सलाम फेर दे। इस हदीस को अहमद, अबू दाऊद और नसाई ने रिवायत किया है। भय की नमाज़ पढ़ते समय हथियारबंद रहना मुस्तहब है, क्योंकि अल्लाह तआला का फरमान है : {और उन्हें अपने हथियार साथ रखने चाहिए।} अगर उसे वाजिब भी कहा जाए तो अल्लाह तआला के इस कथन के कारण ऐसा कहा जा सकता है : {यदि तुम बारिश का कष्ट झेल रहे हो या बीमार हो तो इसमें कोई हर्ज नहीं कि तुम अपने हथियार रख दो।} जब बहुत ज़्यादा भय का माहौल हो, तो लोग पैदल या सवार, क़िबला रू होकर या क़िबला रू हुए बिना, जैसे भी संभव हो नमाज पढ़ेंगे, क्योंकि अल्लाह तआला का फरमान है : {यदि तुम्हें भय हो तो पैदल या सवार नमाज़ पढ़ो।} बस, जहाँ तक संभव हो इशारे करेंगे और सजदे में रुकू से अधिक झुकेंगे।

जब इमाम का अनुसरण संभव न हो, तो जमाअत से नमाज़ पढ़ना जायज़ नहीं होगा।

(अध्याय : जुमे की नमाज़ का बयान)

जुमे की नमाज़ हर वयस्क, विवेकी, मर्द, आज़ाद और किसी एक नाम के तहत आने वाली आबादी के अंदर रहने वाले मुसलमान पर व्यक्तिगत रूप से फ़र्ज़ है। यदि किसी ऐसे व्यक्ति ने जुमे की नमाज़ पढ़ ली, जिसपर फ़र्ज़ नहीं है, तो उसकी नमाज़ हो जाएगी। जिसको जुमे की नमाज़ की एक रक्अत मिल जाए, वह जुमे की नमाज़ पूरी करेगा, परंतु यदि एक भी रक्अत न मिले, तो ज़ुहर की नमाज़ पढ़ेगा। जुमे की नमाज़ से पहले दो ख़ुतबे जरूरी हैं, जिनमें अल्लाह की प्रशंसा, अल्लाह के अकेले पूज्य होने और मुहम्मद-सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- के रसूल होने की गवाही तथा ऐसी बातें होंगी, जो दिलों को प्रभावित करें और जिन्हें ख़ुतबा कहा जा सके। ख़ुतबा मिंबर पर से या ऊँची जगह से दिया जाएगा। ख़ुतबा देने वाला जब ख़ुतबा देने के लिए निकले, तब और जब मिंबर पर खड़े हो जाए, तो मस्जिद में उपस्थित लोगों को सलाम करेगा। उसके बाद अज़ान पूरी होने तक मिंबर पर ही बैठा रहेगा। इसका प्रमाण अब्दुल्लाह बिन उमर -रज़ियल्लाहु अन्हुमा- की वह हदीस है, जिसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है। ख़ुतबा देने वाला दोनों ख़ुतबों के बीच कुछ क्षणों के लिए बैठेगा, जैसा कि बुख़ारी और मुस्लिम में वर्णित उमर -रज़ियल्लाहु अन्हु- की हदीस में आया है। ख़ुतबा खड़े होकर देगा, क्योंकि आप -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ऐसा ही किया करते थे। इस दौरान अपने सामने की ओर नज़र रखेगा

और संक्षिप्त ख़ुतबा देगा। जुमे की नमाज़, दो रक्अत है। दोनों रकअतों में ऊँची आवाज़ से क़ुरआन पढ़ेगा तथा पहली रक्अत में सूरतुल-जुमुआ और दूसरी रक्अत में सूरतुल-मुनाफ़िक़ून, अथवा पहली रक्अत में सूरतुल-आला और दूसरी रक्अत में सूरतुल-ग़ाशिया पढ़ेगा। दोनों के संबंध में सहीह हदीस मौजूद है। जुमे के दिन की फ़ज्र की नमाज़ में सूरत अलिफ़-लाम-मीम अस-सजदा और सूरतुल-इनसान पढ़ना चाहिए, लेकिन हमेशा ऐसा करना मकरूह है। यदि जुमे के दिन ईद पड़ जाए तो इमाम के सिवाय, उन सभी लोगों पर से जुमे की नमाज़ साक़ित हो जाएगी जो ईद की नमाज़ में उपस्थित रहे होंगे। परंतु इमाम, यद्यपि ईद में उपस्थित रहा हो, तब भी उसे जुमे की नमाज़ पढ़नी होगी।

जुमे की नमाज़ के बाद सुन्नत, दो या चार रक्अत है। उससे पहले कोई सुन्नत नहीं है, लेकिन जो जितनी चाहे, नफ़्ल पढ़ सकता है। उस दिन स्नान करना, मिसवाक करना, ख़ुश्बू लगाना, अपने सबसे अच्छे कपड़े पहनना और जल्दी पैदल चलकर जाना सुन्नत है। दूसरी अज़ान हो जाए, तो पूरी विनम्रता और इतमीनान के साथ नमाज़ के लिए निकल जाना अनिवार्य है और फिर मस्जिद पहुँचकर इमाम के निकट रहे और उस दिन ख़ूब दुआएँ करे इस आशा में कि दुआ के क़बूल होने का समय पा ले। याद रहे कि वह समय जिसमें दुआ क़बूल होने की सबसे अधिक आशा है, अस्र के बाद की अंतिम घड़ी है, जब आदमी वुज़ू करके मग़रिब की नमाज़ की प्रतीक्षा में रहता है, क्योंकि वह नमाज़

में होता है। जुमे को, दिन और रात में, अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- पर बहुत ज़्यादा दुरूद पढ़ना और सलाम भेजना चाहिए। उस दिन लोगों की गर्दनें फलाँगते हुए आगे नहीं जाना चाहिए, लेकिन अगर किसी ख़ाली जगह तक पहुँचने के लिए ऐसा करना अनिवार्य हो, तो कर सकता है। दूसरे को उठाकर स्वयं उसकी जगह पर नहीं बैठना चाहिए, चाहे वह उसका अपना ही ग़ुलाम या लड़का ही क्यों न हो। जो ऐसे वक्त मस्जिद में पहुँचे, जब इमाम ख़ुतबा दे रहा हो, तो दो हल्की रक्अत पढ़े बिना न बैठे। साथ ही जब इमाम ख़ुतबा दे रहा हो, तो न किसी से बात करे और न किसी चीज़ से खेले, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फरमान है : "जिसने (ख़ुतबा के दौरान) कंकड़ी को भी छुआ, उसने व्यर्थ कार्य किया।" इसे तिरमिज़ी ने सही करार दिया है। ख़ुतबे के दौरान जिसे ऊँघ आए, वह स्थान बदले ले, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने इसका आदेश दिया है। इसे भी इमाम तिरमिज़ी ने सही करार दिया है।

(अध्याय : दोनों ईदों की नमाज़ का बयान)

यदि ईद के दिन का पता सूरज के ढलने के बाद चले, तो अगले दिन ईदगाह जाए और ईद की नमाज़ पढ़े। ईदुल-अज़हा की नमाज़ जल्दी और ईदुल-फ़ित्र की नमाज़ देर से पढ़ना सुन्नत है। ईदुल-फ़ित्र की नमाज़ के लिए निकलने से पहले, विषम संख्या में खजूरें खाना चाहिए, जबकि ईदुल-अज़हा की नमाज़ पढ़ लेने के पश्चात ही कुछ खाना चाहिए। ईद की नमाज़ के लिए एक रास्ते से जाए और दूसरे रास्ते से वापस आए। दोनों ईद की नमाज़, किसी निकट के मैदान में पढ़ना सुन्नत है। दोनों दिन इमाम दो रक्अत नमाज़ पढ़ाए। पहली रक्अत में तकबीर-ए-तहरीमा के बाद छः अतिरिक्त तकबीरें कहे और दूसरी रक्अत में पाँच अतिरिक्त तकबीरें कहे। हर तकबीर के साथ दोनों हाथों को भी उठाए। पहली रक्अत में सूरतुल-आला और दूसरी रक्अत में सूरतुल-ग़ाशिया पढ़े। नमाज़ से फ़ारिग होकर ख़ुतबा दे। ईदगाह में न ईद की नमाज़ से पहले कोई नफ़्ल नमाज़ पढ़े और न ही ईद की नमाज़ के बाद। दोनों ईदों के अवसर पर, मस्जिदों, रास्तों, बस्तियों और शहरों में ऊँची आवाज़ से तकबीर पढ़ना सुन्नत है। दोनों ईदों की रातों में और सुबह को नमाज़ के लिए निकलते समय तकबीर पढ़ने की ताकीद आई है। ईदुल-अज़हा के अवसर पर, मुतलक़ तकबीर ज़ुल-हिज्जा की पहली तारीख़ से और मुक़य्यद तकबीर अरफ़ा के दिन फ़ज्र की नमाज़ से आरंभ होकर अय्याम-ए-तशरीक़ के अंतिम दिन अस्र तक जारी रहती है। ज़ुल-हिज्जा महीने के शुरूआती दस दिनों में नेकी के कार्य करने में भी ख़ूब परिश्रम करना चाहिए।

(अध्याय : सूर्य ग्रहण की नमाज़ का बयान)

इसका समय ग्रहण लगने से ग्रहण के ख़त्म होने तक है। यह नमाज़ हज़र (निवास की स्थिति) और यात्रा दोनों में, यहाँ तक कि औरतों के लिए भी सुन्नत-ए-मुअक्कदा है। सूर्य को ग्रहण लगने पर अल्लाह को याद करना, दुआ करना, अपने गुनाहों की अल्लाह से माफ़ी चाहना, गुलाम आज़ाद करना और सदका देना सुन्नत है। अगर नमाज़ समाप्त हो गई और ग्रहण खत्म नहीं हुआ तो फिर से नमाज़ नहीं दोहराई जाएगी, अपितु उस वक्त तक लोग अल्लाह को याद करेंगे और अपने गुनाहों की माफ़ी माँगते रहेंगे, जब तक ग्रहण ख़त्म न हो जाए। उसके लिए "الصلاة جامعة" (नमाज़ के लिए एकत्र हो जाओ) कहकर ऐलान किया जाएगा और दो रक्अत नमाज़ अदा की जाएगी, जिनमें ऊँची आवाज़ में क़ुरआन का पाठ किया जाएगा। इसमें क़ुरआन-पाठ, रुकू और सजदे लंबे किए जाएँगे। हर रक्अत में दो रुकू होंगे, लेकिन ध्यान रहे कि दूसरी रक्अत के रुकू, पहली रक्अत के रुकू के मुकाबले में छोटे होंगे। फिर तशह्हुद में बैठने और उसकी दुआएँ पढ़ने के बाद सलाम फेर दिया जाएगा। यदि नमाज़ के दौरान ही ग्रहण खुल जाए तो नमाज़ को हल्का कर दिया जाना चाहिए, क्योंकि प्यारे नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने फरमाया है : "तुम लोग नमाज़ पढ़ो और दुआ करो, यहाँ तक कि तुमपर जो आपदा आई हुई है, वह दूर हो जाए।"

(अध्याय : इस्तिसक़ा -बारिश माँगने- की नमाज़)

यह हज़र (निवास की स्थिति) और यात्रा दोनों में मुअक्कद सुन्नत है और इसकी विधि वही है जो ईद की नमाज़ की है। इसे दिन के पहले भाग में अदा करना और इसके लिए पूर्ण विनम्रता, विनय और विवशता प्रदर्शित करते हुए निकलना चाहिए, जैसा कि अब्दुल्लाह बिन अब्बास -रज़ियल्लाहु अन्हुमा- से वर्णित हदीस में है, जिसे इमाम तिरमिज़ी ने सहीह करार दिया है। इमाम नमाज़ पढ़ाने के बाद सिर्फ एक ख़ुतबा देगा, बहुत ज़्यादा तौबा एवं इस्तिग़फ़ार करेगा, दुआ करेगा और दुआ करने के लिए अपने हाथों को कुछ ज़्यादा ही ऊपर उठाएगा और यह दुआएँ पढ़ेगा :

"اللهم اسقنا غيثاً مغيثاً هنيئاً مريئاً مريعاً غدقاً مجللا سحاً عاماً طبقاً دائماً نافعاً غير "ضار عاجلا غير آجل"

(ऐ अल्लाह, हमें सैराब कर, ऐसी बारिश दे जो मदद करने वाली हो, ख़ुशगवार हो, अच्छी और मोटे बूंद वाली हो, घनी और मौसलाधार हो, जल-थल करने वाली हो, ढांप लेने वाली हो, देर तक बरसने वाली हो, लाभकारी हो, हानिकारक न हो, देर न करके जल्दी आने वाली बारिश हो।)

"اللهم اسق عبادك وبهائمك وانشر رحمتك وأحيي بلدك الميت اللهم اسقنا الغيث ولا تجعلنا من القانطين ، اللهم سقيا رحمة لا سقيا عذاب ولا بلاء ولا هدم ولا غرق "

(ऐ अल्लाह! अपने बंदों और जानवरों को तृप्त कर दे, अपनी करूणा को विस्तृत कर दे, अपने मुर्दा देश को ज़िंदा कर दे। ऐ अल्लाह! हमें बारिश प्रदान कर और हमें मायूस हो जाने वालों में से मत बना। ऐ अल्लाह! हमें रहमत की बारिश प्रदान कर, अज़ाब, आपदा, विध्वंस और डुबोने वाली बारिश नहीं!)

" اللهم إن بالعباد والبلاد من اللأواء والجهد والضنك ما لا نشكوه إلا إليك "

(ऐ अल्लाह! लोग और देश दुख, परेशानी और तंगी से पीड़ित हैं, जिनका दुखड़ा हम केवल तुझे ही सुना रहे हैं।)

" اللهم أنبت لنا الزرع ، وأدر لنا الضرع واسقنا من بركات السماء وأنزل علينا من بركاتك اللهم إنا نستغفرك إنك كنت غفاراً فأرسل السماء علينا مدراراً "

(ऐ अल्लाह! हमारे लिए खेती उगा दे, हमें खूब दूध प्रदान कर, हमें आसमान की बरकतों से मालामाल कर, और हमपर अपनी बरकतें उतार। ऐ

अल्लाह! हम तुझसे अपने पापों की क्षमा याचना करते हैं, बेशक तू बहुत ज्यादा बख़्शने वाला है। अतः हमपर आसमान से घनघोर बारिश बरसा।)

ख़ुतबा देते समय, मुँह को क़िबले की तरफ रखना मुस्तहब है। फिर अपनी चादर को पलटते हुए, दाएँ तरफ के दामन को बाएँ तरफ और बाएँ तरफ के दामन को दाएँ तरफ करेगा, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने अपनी पीठ लोगों की तरफ फेरी थी, अपना चेहरा क़िबले की ओर कर लिया था और अपनी चादर भी पलटी थी। इस हदीस को बुख़ारी एवं मुस्लिम ने रिवायत किया है। क़िबले की ओर मुँह करके चुपके-चुपके से दुआ करेगा। अगर फ़र्ज़ नमाज़ों के बाद या जुमे के ख़ुतबे में ही ये दुआएँ की जाएँ, तो भी सुन्नत पर अमल हो जाएगा। बारिश की पहली बौछारों में खड़ा रहना, अपनी सवारी और कपड़ों को बाहर निकालना ताकि उनपर बारिश की बूँदें पड़ें, और जब घाटियों में सैलाब आजाए तो वहाँ जाना और उसके पानी से वुज़ू करना मुस्तहब है। जब बारिश का आना देखे, तो यह दुआ पढ़नी चाहिए : "اللهم صيباً نافعاً" (ऐ अल्लाह! इसे लाभदायिक वर्षा बनादे।) जब बारिश बहुत ज्यादा होने लगे और बेहद बारिश से बाढ़ का खतरा पैदा हो जाए, तो यह दुआ करना मुस्तहब है :

" اللهم حوالينا ولا علينا اللهم على الظراب والآكام وبطون الأودية ومنابت الشجر "

(ऐ अल्लाह! हमारे आस-पास बारिश बरसा, हमपर नहीं। टीलों पर, पहाड़ियों पर, घाटियों के निचले हिस्सों में और पेड़ों के उगने की जगहों पर बरसा।) बारिश होते समय यह दुआ करे : "مطرنا بفضل الله ورحمته" (हमपर अल्लाह की दया एवं करूणा से बारिश हुई है।) जब बादलों को उमड़ता देखे या हवा बहने लगे तो अल्लाह तआला से उसकी भलाई माँगे और उसकी बुराई से पनाह माँगे। हवा को गाली देना जायज़ नही है, अपितु यह दुआ करे :

"اللهم إني أسألك من خير هذه الريح وخير ما فيها وخير ما أرسلت به وأعوذ بك من شرها وشر ما فيها وشر ما أرسلت به اللهم اجعلها رحمة ولا تجعلها عذاباً، اللهم اجعلها رياحاً ولا تجعلها ريحاً "

(ऐ अल्लाह! मैं तुझसे इस हवा की और इसमें जो कुछ है और उसमें जो कुछ तूने डालकर भेजा है, उसकी भलाई माँगता हूँ। मैं तुझसे उसकी बुराई, उसके अंदर की बुराई और उसमें जो कुछ तूने भेजा है, उसकी बुराई से तेरी शरण चाहता हूँ। ऐ अल्लाह! तू उसे रहमत बना दे, अज़ाब न बना। ऐ अल्लाह! उसे अच्छी हवा बना दे, हलाक करने वाली हवा न बना।)

जब बादल के गरजने और बिजलियों के कड़कने की आवाज़ सुने तो यह दुआ पढ़े :

"اللهم لا تقتلنا بغضبك ولا تهلكنا بعذابك وعافنا قبل ذلك سبحان من سبح الرعد بحمده والملائكة من خيفته"

(ऐ अल्लाह! तू हमें अपने क्रोध से मत मार, अपने अज़ाब से हलाक मत कर और हमें उससे पहले सुरक्षित कर दे। पाक है वह हस्ती, कड़क ने जिसकी पाकी बयान की और प्रशंसा की और फ़रिश्तों ने भी जिसके डर से उसकी पाकी बयान की और स्तुति की।)

इसी तरह जब गधे के रेंकने और कुत्ते के भौंकने की आवाज़ सुने, तो शैतान से अल्लाह की पनाह माँगे, और जब मुर्गे की बाँग देने की आवाज़ सुने तो अल्लाह से उसका फ़ज़्ल (अनुग्रह) माँगे।

(अध्याय : जनाज़ों का बयान)

इस बात पर सारे उलमा एकमत हैं कि बीमारियों का उपचार करना जायज़ है और यह तवक्कुल यानी अल्लाह पर पूर्ण विश्वास के खिलाफ नहीं है। तपी हुई चीज़ से दागना मकरूह है, जबकि परहेज़ करना मुस्तहब है। जो भी खाद्य पदार्थ या पेय हराम है, उसे दवा के तौर पर प्रयोग करना और संगीत से उपचार करना हराम है, क्योंकि प्यारे नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फ़रमान है : "तुम लोग हराम वस्तु से इलाज न करो।" तावीज़ और गंडे से इलाज करना हराम है। मृत्यु को बहुत याद करना और उसके लिए तैयारी करना सुन्नत है। बीमार व्यक्ति का हाल जानने के लिए जाना भी सुन्नत है। यदि बीमार शख़्स, अल्लाह की प्रशंसा करते हुए बिना शिकवा-शिकायत के अपने दुख-दर्द का इज़हार करता है, तो इसमें कोई हर्ज नहीं है। लेकिन धैर्य रखना, अनिवार्य है। अल्लाह तआला से अपनी बीमारी का शिकवा करना, तवक्कुल के खिलाफ नहीं, अपितु यह अभीष्ट है। बीमार को चाहिए कि अल्लाह तआला के प्रति अच्छा गुमान रखे और अपने आप पर उतरने वाली मुसीबत से घबरा कर मौत की कामना न करे। बीमारपुर्सी करने वाले को बीमार के लिए शिफा की दुआ करनी चाहिए। यदि मौत करीब आ लगे तो बीमार को ला-इलाहा इल्लल्लाह पढ़ते रहने पर आमादा करते रहना चाहिए और उसका रुख क़िबले की तरफ कर देना चाहिए। जब मर जाए तो उसकी आँखें बंद कर देनी चाहिए और उसके परिवारजनों को उसके बारे में केवल अच्छी बातें कहनी चाहिएँ, क्योंकि उस समय फ़रिश्ते उनकी हर बात पर आमीन (अर्थात ऐ अल्लाह! तू इस बात को क़बूल कर) कहते हैं। मृतक को

कपड़े से ढाँक देना चाहिए, उसके क़र्ज़ों की शीघ्र अदायगी कर देनी चाहिए, अगर उसके ज़िम्मे मन्नत पूरी करना या कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) अदा करना जैसी ज़िम्मेवारियाँ हों तो उनको, अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- के इस आदेश के अनुसार तुरंत पूरा कर देना चाहिए : "मोमिन की आत्मा, उसके कर्जे से उस वक्त तक बंधी रहती है, जब तक उसे अदा न कर दिया जाए।" तिरमिज़ी ने इसे हसन कहा है। उसके कफ़न-दफ़न की तैयारी में जल्दी करना सुन्नत है, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम - ने फ़रमाया है : "यह उचित नहीं है कि मुस्लिम की लाश उसके परिजनों के बीच क़ैद रखी जाए।" इसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है। मरे हुए व्यक्ति की मृत्यु का एलान करना मकरूह है।

मृतक को स्नान देना, उसकी जनाज़े की नमाज़ पढ़ना, उसके जनाज़े को काँधा देना, उसको कफ़न पहनाना और क़िबले की ओर मुँह करके दफ़नाना फ़र्ज़-ए-किफ़ाया है। उपर्युक्त कार्यों में से किसी भी कार्य पर मज़दूरी लेना या बिना ज़रूरत के उसे दूसरे शहर में दफ़नाने के लिए ले जाना, मकरूह है। स्नान देने वाले के लिए, स्नान की शुरूआत वुज़ू के अंगों से और हर अंग को दाएँ से धोना शुरू करना सुन्नत है। उसके शरीर पर तीन बार या पाँच बार पानी बहाना चाहिए, लेकिन एक बार पानी बहाना भी पर्याप्त है। यदि चार महीने से अधिक के भ्रूण का गर्भपात हो जाए, तो उसे स्नान दिया जाएगा और उसकी जनाज़े की नमाज़ पढ़ी जाएगी, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम-

का फरमान है : "माँ के पेट से समय से पहले गिर जाने वाले शिशु की जनाज़े की नमाज पढ़ी जाएगी और उसके माता-पिता के लिए गुनाहों की माफ़ी और रहमत की दुआ की जाएगी।" इसे तिरमिज़ी ने सहीह करार दिया है। सुनन तिरमिज़ी में "शिशु पर जनाज़े की नमाज़ पढ़ी जाएगी" के शब्द हैं। पानी उपलब्ध न होने या किसी अन्य कारणवश, यदि मृतक को स्नान देना संभव न हो, तो उसके शरीर को तयम्मुम कराया जाएगा। कफ़न के लिए कम से कम एक ऐसा कपड़ा होना आवश्यक है, जिससे उसका पूरा शरीर ढक जाए। यदि ऐसा कपड़ा उपलब्ध न हो तो उसके गुप्तांगों, फिर सिर और उससे मिले हुए अंगों को ढाँका जाए और फिर शेष शरीर पर घास या पेड़ के पत्ते डाल दिए जाएँ। जनाज़े की नमाज़ में इमाम मर्द मृतक के सीने के सामने और महिला मृतक के बीच शरीर के सामने खड़ा होगा। फिर तकबीर (अल्लाहु अकबर) कहने के बाद सूरत फ़ातिहा पाठ करेगा, फिर तकबीर कहकर अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- पर दुरूद पढ़ेगा, फिर तीसरी तकबीर कहने के बाद मृतक के लिए दुआ करेगा और उसके बाद चौथी तकबीर कहने के बाद कुछ क्षणों के लिए रुकेगा और फिर दाएँ तरफ एक सलाम फेर देगा। प्रत्येक तकबीर के साथ अपने दोनों हाथ उठाएगा और नमाज़ के बाद जनाज़ा उठा लिए जाने तक अपनी जगह पर खड़ा रहेगा, क्योंकि उमर -रज़ियल्लाहु अन्हु- से ऐसा ही नक़ल किया गया है। ऐसे लोग जो जनाज़े में उपस्थित नहीं हो सके, मुस्तहब यह है कि वे मृतक को रखे जाने के बाद या फिर दफ़नाने के बाद क़ब्र पर दफ़नाने से लेकर एक महीने

के भीतर कभी भी जनाज़े की नमाज़ पढ़ लेंगे। और यदि चाहें तो ये लोग जमाअत के साथ, भी पढ़ सकते हैं। रात को दफ़नाने में कोई हर्ज नहीं है, लेकिन सूर्योदय, सूर्यास्त और उसके बीच आकाश में होते समय दफ़नाना मकरूह है। जनाज़े को लेकर तेज़ चलना सुन्नत है, लेकिन दौड़ने की अनुमति नहीं है। जनाज़े के साथ चलने वालों के लिए, उसे दफ़न के लिए धरती पर रखे जाने से पहले बैठना मकरूह है। साथ चलने वाले को विनम्र और अपने अंजाम के बारे में सोचते हुए नजर आना चाहिए। इस समय मुस्कुराना और दुनिया के बारे में बातें करना मकरूह है। यदि आसानी हो तो शव को पैर की तरफ से क़ब्र में उतारना मुस्तहब है। दफ़न करते समय पुरुष की क़ब्र को कपड़े से ढाँपना मकरूह है। मर्द का औरत को दफ़नाना मकरूह नहीं है, चाहे वहाँ कोई महरम ही क्यों न मौजूद हो। लह्द (बग़ली क़ब्र) सीधी क़ब्र से उत्तम है। क़ब्र को गहरा और कुशादा करना सुन्नत है और ताबूत समेत दफ़नाना मकरूह है। जब लाश क़ब्र में रखी जाए तो "بسم الله وعلى ملة رسول الله" (अल्लाह के नाम पर और अल्लाह के रसूल की मिल्लत पर) पढ़ना चाहिए। दफ़न के बाद क़ब्र के पास खड़े होकर मृतक के लिए दुआ करना मुस्तहब है और इसी तरह वहाँ मौजूद लोगों के लिए शव के सिर की तरफ से क़ब्र पर तीन लप मिट्टी डालना मुस्तहब है।

क़ब्र को ज़मीन से एक बित्ता ऊँचा करना मुस्तहब है और उससे अधिक ऊँचा करना मकरूह है, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम- ने अली -रज़ियल्लाहु अन्हु- से कहा था : "जो भी प्रतिमा मिले, उसे मिटा दो और जो भी ऊँची क़ब्र मिले, उसे बराबर कर दो।" इसे मुस्लिम ने रिवायत किया है।

क़ब्र पर पानी छिड़का जाए और उसके ऊपर कंकड़ियाँ बिछा दी जाएँ, ताकि उसकी मिट्टी सुरक्षित रहे। पहचान के लिए पत्थर या उस जैसी वस्तु से क़ब्र पर निशान लगाने में कोई हर्ज नहीं है, क्योंकि उसमान बिन मज़ऊन -रज़ियल्लाहु अन्हु- की क़ब्र पर निशान लगाने की रिवायत मौजूद है। क़ब्र को पक्का करना और उसपर निर्माण करना जायज़ नहीं है। अगर कहीं ऐसा निर्माण है, तो उसे ढहा देना वाजिब है। क़ब्र पर दूसरी जगह की मिट्टी लाकर डालना भी सही नहीं है, क्योंकि उससे मना किया गया है। इसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है। क़ब्र को चूमना, उसपर सुगंध लगाना, उसे धूनी देना, उसपर बैठना और उसके पास आकर एकांत ग्रहण करना जायज़ नहीं है। इसी प्रकार, क़ब्रों के दरमियान बैठना भी जायज़ नहीं है। न ही उसकी मिट्टी द्वारा शिफा तलब करना जायज़ है,तथा उसपर दीपक जलाना और उसके ऊपर मस्जिद बनाना भी हराम है। अगर ऐसी कोई मस्जिद है भी, तो उसे ध्वस्त कर देना वाजिब है। क़ब्रिस्तान में चप्पल या जूता पहनकर चलना नहीं चाहिए। इसकी मनाही हदीस में आई है। इमाम अहमद कहते हैं कि इस हदीस की सनद जय्यिद (अच्छी) है।

क़ब्रों की ज़ियारत सुन्नत है, लेकिन इसके लिए यात्रा करने की अनुमति नहीं है, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फ़रमान है : "यात्रा करके जाने की अनुमति केवल तीन मस्जिदों के लिए है।" औरतों के लिए क़ब्रों की ज़ियारत जायज़ नहीं है, क्योंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने फ़रमाया है : "क़ब्रों की ज़ियारत करने वाली औरतों, उनके ऊपर मस्जिदें बनाने वालों और दीपक जलाने वालों पर अल्लाह की लानत हो!" इसे सुनन वाले मुहद्दिसों ने रिवायत किया है। क़ब्र को बरकत प्राप्ति की नीयत से छूना, उसके पास नमाज़ पढ़ना और उसके पास दुआ करने के उद्देश्य से जाना मकरूह है। ये सब घृणित कार्यों में से हैं, बल्कि शिर्क की शाखाएँ हैं। क़ब्र की ज़ियारत करने वाला और उसके पास से गुज़रने वाला, यह दुआ पढ़ेगा :

" السلام عليكم دار قوم مؤمنين وإنا إن شاء الله بكم لاحقون يرحم المستقدمين منّا ومنكم والمستأخرين نسأل الله لنا ولكم العافية ، اللهم لا تحرمنا أجرهم ولا تفتنا بعدهم واغفر لنا ولهم "

(ऐ मोमिनों के घरों के निवासियो! तुमपर अल्लाह की तरफ से शांति बरसे। बेशक हम भी -अगर अल्लाह चाहे- तुम लोगों से आ मिलने वाले हैं। अल्लाह हममें और तुममें से यहाँ पहले एवं बाद में आने वालों पर दया करे। हम अपने लिए और तुम्हारे लिए आफ़ियत माँगते हैं। ऐ अल्लाह! हमें उनके

पुण्य से वंचित मत कर, हमें उनके बाद मत आज़मा और हमें एवं उनको भी माफ़ कर दे।)

जीवित व्यक्ति को सलाम करते समय "अस-सलामु अलैकुम" और "सलामुन अलैकुम" दोनों कहना सही है। किसी को सलाम करना सुन्नत है और उसका जवाब देना वाजिब है। यदि कोई किसी को सलाम करे और फिर उसी आदमी से दूसरी बार, तीसरी बार या उससे ज़्यादा बार मुलाकात हो, तो हर बार सलाम करेगा। झुककर सलाम करना जायज़ नहीं है। इसी तरह किसी अजनबी औरत को सलाम करना जायज़ नहीं है। यह और बात है कि वह औरत इतनी बूढ़ी हो कि जिसके लिए पुरुषों में कोई लालसा बाकी ना बची हो। कहीं जाकर वापस आए, तो वहाँ मौजूद लोगों को सलाम करे। जब अपने घरवालों के पास आए, तो सलाम करते हुए कहे :

"اللهم إني أسألك خير المولج وخير المخرج بسم الله ولجنا وبسم الله خرجنا وعلى الله توكلنا "

(ऐ अल्लाह! मैं तुझसे प्रवेश करने और निकलने की भलाई माँगता हूँ। हम अल्लाह के नाम से प्रवेश करते हैं, अल्लाह ही के नाम से निकलते हैं और अल्लाह ही पर भरोसा करते हैं।) मुसाफ़हा करना (हाथ मिलाना) सुन्नत है, क्योंकि इस संबंध में अनस -रज़ियल्लाहु अन्हु- की हदीस मौजूद है। लेकिन

औरत से मुसाफ़हा करना जायज़ नहीं है। बच्चों को भी सलाम करना चाहिए। छोटा बड़े को, कम लोगों का गिरोह ज़्यादा लोगों के गिरोह को, चलने वाला बैठे हुए को और सवार पैदल चलने वाले को सलाम करेगा। अगर कोई आदमी किसी को दूसरे का सलाम पहुँचाए, तो वह जवाब में कहे : "عليك وعليه السلام" (तुमपर और उसपर भी, अल्लाह की तरफ से शांति हो।)

दो जनों की मुलाकात हो तो हर किसी में यह चाहत होनी चाहिए कि मैं पहले सलाम करूँ। सलाम करते समय "अस-सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहु" से अधिक शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। यदि उबासी (जँभाई) आए तो क्षमता भर उसे रोकने का प्रयास करना चाहिए। अगर रोक न पाए तो अपना मुँह ढक लेना चाहिए। छींक आए तो अपने चेहरे को ढाँक ले, आवाज़ धीमी रखे और इस तरह "الحمدلله" कहे कि आस-पास के लोग सुन लें। सुनने वाला "يرحمك الله" कहे, फिर छींकने वाला "يهديكم الله ويصلح بالكم" कहकर उसको जवाब दे। जो छींकने पर "الحمدلله" न कहे, उसको "يرحمك الله" कहकर जवाब नहीं दिया जाएगा। छींकने वाले के दूसरी और तीसरी बार छींकने तक उसका जवाब दिया जाएगा। उसके बाद, उसके लिए इस बीमारी से छुटकारे की दुआ की जाएगी।

किसी क़रीबी रिश्तेदार या अजनबी के पास प्रवेश करने के लिए, उससे अनुमति माँगना अनिवार्य है। अगर उसे अनुमति मिल जाए, तो अंदर जाए, अन्यथा लौट जाए। अनुमति केवल तीन बार माँगे, उससे अधिक नहीं।

अनुमति लेने का तरीक़ा यह है कि आदमी कहे : السلام عليكم, क्या मैं अंदर आ सकता हूँ? किसी सभा में जाए तो जहां बैठने वालों का अंत हो, वहीं बैठ जाए। और दो लोगों के बीच उनकी अनुमति के बिना बैठकर दूरी न बनाए।

मृतक के परिजनों को सांत्वना देना मुस्तहब है। लेकिन, उसके लिए बैठक का आयोजन करना मकरूह है। सांत्वना देने के लिए कोई निर्धारित शब्द नहीं हैं। बल्कि, वह उनसे धैर्य रखने का आग्रह करेगा, पुण्य की आशा रखने पर उभारेगा और मृतक के लिए दुआ करेगा। पीड़ित व्यक्ति कहेगा :

" الحمد لله رب العالمين إنا لله وإنا إليه راجعون اللهم أجرني في مصيبتي واخلف لي خيراً منها "

(समस्त प्रशंसाएँ अल्लाह के लिए हैं, जो सारे संसार का पालनहार है। हम सब अल्लाह के लिए हैं और बेशक उसी की तरफ हम सब लौटकर जाने वाले हैं। ऐ अल्लाह! मुझे मेरी मुसीबत का प्रतिफल दे और मुझे इसके बदले में इससे बेहतर दे।) यदि वह अल्लाह तआला के फ़रमान { واستعينوا بالصبر والصلاة} (तुम लोग सब्र और नमाज़ के द्वारा सहायता माँगो) पर अमल करते हुए नमाज़ भी पढ़े, तो अच्छी बात है। अब्दुल्लाह बिन अब्बास -रज़ियल्लाहु अन्हुमा- ने ऐसा किया है। धैर्य रखना वाजिब है। मृतक पर रोना मकरूह नहीं है, लेकिन मातम करना हराम है। अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व

सल्लम- मुसीबत के समय ज़ोर-ज़ोर से रोने वाली, बाल मुँडवाने वाली और कपड़े फाड़ने वाली से बरी हैं। इस समय, अधीर होकर रोना-पीटना हराम है।

(ज़कात से संबंधित आदेश एवं निर्देश)

ज़कात जानवरों, ज़मीन की पैदावारों, नक़दी और व्यापार के सामानों पर पाँच शर्तों के साथ अनिवार्य है : इस्लाम, आज़ादी, निसाब (धन की वह कम से कम मात्रा जिसपर ज़कात वाजिब होती है) का स्वामित्व, पूर्ण स्वामित्व और एक साल गुज़र जाना। बच्चे और पागल के माल पर भी ज़कात वाजिब है। ऐसा उमर और अब्दुल्लाह बिन अब्बास -रज़ियल्लाहु अन्हुम - आदि से वर्णित है और इस मामले में उनका कोई विरोध करने वाला भी नहीं दिखता। निसाब से जो माल ज़्यादा हो, उसकी भी ज़कात हिसाब लगाकर निकालनी होगी। अल्बत्ता, चरने वाले जानवर इससे अपवाद रखते हैं। इसी प्रकार, ग़ैरनिर्धारित पक्ष के लिए किए गए वक़्फ़, जैसे मस्जिद आदि पर भी ज़कात नहीं है। जबकि किसी निर्धारित व्यक्ति के लिए किए गए वक़्फ़ की ज़मीन की पैदावार पर ज़कात है। जिसका किसी सक्षम व्यक्ति के पास उधार, जैसे ऋण एवं महर आदि हो, तो ज़कात निकालने हेतु उसके वर्ष की गिनती उसी समय से शुरू हो जाएगी, जबसे वह उसका मालिक बना हो, लेकिन ज़कात उसपर या उसके कुछ अंश पर क़ब्ज़ा करने के बाद ही देगा। चाहे क़ब्ज़े में आने वाला धन निसाब के बराबर न हो, तब भी। इसपर सहाबा का मतैक्य है। वैसे, क़ब्ज़े से पहले भी यदि उसकी ज़कात निकाल दी जाए, तो कोई हर्ज नहीं है, क्योंकि वुजूब का सबब मौजूद है। लेकिन क़ब्जे तक विलंब करना एक तरह की छूट है। इसी लिए यह, समय से पहले ज़कात अदा करने की तरह नहीं है। अगर निसाब का कुछ हिस्सा हाथ में हो और शेष भाग क़र्ज़ में लगा हुआ हो या खो गया हो, तो जो कुछ हाथ में है, उसकी ज़कात

देना होगी। ऋण चुकाने में असमर्थ व्यक्ति पर जो क़र्ज़ हो, उसकी, ज़बरदस्ती क़ब्ज़ा किए हुए धन की और इनकार किए हुए धन की भी ज़कात देनी है, लेकिन क़ब्ज़ा हो जाने पर। ऐसा अली और इब्ने अब्बास -रज़ियल्लाहु अन्हुम- से वर्णित है। जब बीच साल में कुछ धन प्राप्त हो, तो उसपर साल गुज़र जाने से पहले उसकी ज़कात अदा नहीं करनी है। अल्बत्ता, चरने वाले पशुओं के बच्चों और व्यापार के मुनाफे की ज़कात देना होगी, क्योंकि उमर -रज़ियल्लाहु अन्हु- ने कहा है : "उनकी ज़कात की गिनती में जानवरों के एक वर्ष के बच्चों को ले लो, मगर उन बच्चों को ज़कात के तौर पर न लो।" इसे मालिक ने रिवायत किया है। यही राय अली -रज़ियल्लाहु अन्हु- की भी है और इन दोनों का विरोध किसी सहाबी से साबित नहीं है। बीच साल में प्राप्त होने वाले धन को, पहले से मौजूद धन के साथ मिलाकर निसाब पूरा किया जाएगा, अगर वह उसी की जिंस से हो या उसके हुक्म में हो। जैसे सोने के साथ चाँदी को मिला दिया जाएगा। लेकिन यदि वह उसकी जिंस से न हो या उसके हुक्म में न हो, तो उसका अलग हिसाब होगा।

(अध्याय : जानवरों की ज़कात का बयान)

ज़कात केवल उन जानवरों में वाजिब है, जो साल का अधिकतर भाग चरकर गुज़ारा करते हों। यदि उनके लिए चारा ख़रीदा जाए या एकत्र करके रख लिया जाए, तो उनपर ज़कात नहीं है। ज़कात वाले जानवरों की तीन क़िस्में हैं :

(पहली क़िस्म) ऊँट : ऊँटों की संख्या जब तक 5 न हो जाए, उनपर ज़कात नहीं है। जब उनकी संख्या 5 हो जाए, तो ज़कात के तौर पर एक बकरी देनी होगी। फिर, दस पर दो बकरियाँ, पंद्रह पर तीन बकरियाँ और बीस पर चार बकरियाँ देना होंगी। इसपर सबका मतैक्य है। फिर, जब संख्या 25 हो जाए, तो एक बिंत-ए-मख़ाज़ यानी एक वर्ष की ऊंटनी देनी है। अगर बिंत-ए-मख़ाज़ उपलब्ध न हो, तो एक इब्न-ए-लबून अर्थात दो साल का ऊँट देना होगा। फिर जब संख्या 36 हो, तो एक बिंत-ए-लबून यानी दो साल की ऊंटनी, 46 हो तो एक हिक़्क़ा यानी तीन साल की ऊँटनी, 61 हो तो एक जज़आ यानी चार साल की ऊँटनी, 76 हो तो दो बिंत-ए-लबून, 91 हो तो दो हिक़्क़ा, 121 हो तो तीन बिंत-ए-लबून हैं। फिर, इसके बाद हर 40 ऊँटों पर एक बिंत-ए-लबून और 50 पर एक हिक़्क़ा देनी होगी। फिर जब ऊँटों की संख्या 200 हो जाए, तो आदमी को एख़्तियार होगा कि चाहे तो चार हिक़्क़ा दे और चाहे तो पाँच बिंत-ए-लबून दे।

(दूसरी क़िस्म) गाय : 30 से कम गायों पर ज़कात नहीं है। जब उनकी संख्या 30 हो जाए, तो एक साल का एक बछड़ा या बछिया देनी होगी। 40 हो

जाए तो दो साल की एक बछिया देनी होगी, 60 पर एक-एक साल के दो बछड़े और उससे आगे हर 30 पर एक साल का एक बछड़ा और हर 40 पर दो साल की एक बछिया देनी होगी।

(तीसरी क़िस्म) बकरी : 40 से कम बकरियों पर ज़कात नहीं है। अगर 40 बकरियाँ हों, तो 120 तक की संख्या तक एक बकरी देना होगी। यदि संख्या 121 हो जाए, तो 200 तक दो बकरियाँ देना होंगी। यदि उससे एक भी अधिक हो जाए,तो फिर तीन बकरियाँ देना होंगी।

फिर, 300 बकरियों पर चार बकरियाँ और उसके बाद हर 100 बकरियों पर एक बकरी देनी होगी। ज़कात में साँड़, बूढ़े, ऐब वाले, दूध पिलाने वाले, गर्भवती और मोटे-ताज़े जानवर तथा उत्तम धन को चुनकर नहीं लिया जाएगा, क्योंकि अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने फरमाया है : "तुम लोग ज़कात औसत दर्जे के धन से लिया करो, क्योंकि अल्लाह ने न सबसे बढ़िया माल लेने का आदेश दिया है और न सबसे घटिया।" इसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है। यदि पशुओं में साझेदारी हो, तो उन्हें एक ही धन समझा जाएगा।

(अध्याय : ज़मीन के पैदावार की ज़कात)

तमाम तरह के खाद्यान्न आदि में, जिन्हें तौला और ज़ख़ीरा करके रखा जा सके, दो शर्तों के साथ ज़कात वाजिब है : पहली शर्त यह है निसाब (धन की कम से कम मात्रा जिसपर ज़कात वाजिब होती है) को पहुँच जाए। याद रहे कि अनाजों आदि का निसाब पांच वसक़ यानी साठ साअ् है। निसाब पूरा करने के लिए, एक वर्ष के सभी फलों तथा अनाजों को आपस में मिलाया जाएगा। दूसरी शर्त यह है कि आदमी ज़कात वाजिब होते समय निसाब का मालिक रहा हो। यही कारण है कि चुने हुए, भेंट में मिले हुए या कटाई की मजदूरी के तौर पर प्राप्त अनाजों तथा फलों की ज़कात नहीं देनी है। ज्ञात हो कि जिस खेती को बिना ख़र्च के सैराब किया जाए, उसका दसवाँ भाग देना है, तथा जिस खेती को खर्च करके सैराब किया जाए उसका बीसवाँ भाग देना है और जिस खेती को दोनों तरह से सैराब किया जाए, उसका पंद्रहवाँ भाग देना है। यदि दोनों में अंतर हो तो जिसमें ज़्यादा लाभ हो, उसके हिसाब से ज़कात अदा की जाएगी और यदि कुछ मालूम न हो तो फिर दसवाँ हिस्सा अदा करना होगा। अनाज की ज़कात साफ करने के बाद और फल की ज़कात सुखाने के बाद देना ज़रूरी है। ज़कात में निकाले हुए अथवा सदक़ा किए हुए माल को ख़रीदना जायज़ नहीं है। हाँ, यदि विरासत के तौर पर उसके पास लौट जाए तो जायज़ है। इमाम, फलों को तोड़ने का समय आने पर अंदाज़ा लगाने वाले को भेजेगा। अंदाज़ा लगाने के

लिए एक ही व्यक्ति को भेजना काफ़ी है। अंदाज़ा लगाने वाला बाग के मालिक के लिए इतना रसीले फल छोड़ देगा, जो उसके तथा उसके बाल-बच्चों के लिए काफ़ी हो। यदि वह न छोड़े तो मालिक के लिए जायज़ है कि वह खुद से रख ले। इमाम अहमद ने रात में कटाई एवं तुड़ाई को मकरूह कहा है। जिन अनाजों पर दसवाँ हिस्सा ज़कात के तौर पर लगता है, उनपर दोबारा ज़कात नहीं लगेगी, चाहे वह कई सालों तक रह जाएँ। लेकिन अगर व्यवसाय की नीयत से रखा जाएं, तो हर साल ज़कात अदा करनी होगी।

(अध्याय : सोने-चाँदी की ज़कात)

सोने की ज़कात का निसाब बीस मिसक़ाल है और चाँदी का दो सौ दिरहम। इनमें ढाई प्रतिशत ज़कात है। निसाब पूरा करने लिए, सोने और चाँदी को एक साथ जोड़ा जा सकता है और सामानों की कीमत को भी इन दोनों में से हर एक के साथ जोड़ा जा सकता है। जायज़ गहनों में ज़कात नहीं है, लेकिन यदि व्यापार के लिए तैयार किया जाएं तो उनपर ज़कात अनिवार्य है। मर्द के लिए चाँदी की केवल अंगूठी पहनना जायज़ है और उसे बाएँ हाथ की कनिष्ठा में पहनना उत्तम है। इमाम अहमद ने दाएँ हाथ में अंगूठी पहनने की हदीस को ज़ईफ़ (कज़ोर) कहा है। मर्द एवं औरत दोनों के लिए लोहे, ताँबे और पीतल की अंगूठी पहनना मकरूह है। इमाम अहमद ने इसे खुले शब्दों में नापसंद किया है। तलवार का वह भाग, जो मूठ के ऊपर होता है, उसे और कमरबंद को चाँदी से आभूषित करना जायज़ है, क्योंकि सहाबा -रज़ियल्लाहु अन्हुम- ने चाँदी से आभूषित कमरबंद का इस्तेमाल किया है। औरत के लिए सोने और चाँदी के प्रचलित आभूषण पहनना जायज़ है, लेकिन किसी भी सूरत में मर्द का औरत की और औरत का मर्द की समरूपता धारण करना हराम है।

(अध्याय : व्यावसायिक सामान की ज़कात)

जब सामान व्यवसाय के लिए हो और उसकी क़ीमत निसाब तक पहुँच जाए तो उसमें ज़कात वाजिब हो जाती है। जो वस्तु किराए पर देने के लिए होती है, जैसे ज़मीन, जानवर आदि उस पर ज़कात नहीं है।

(अध्याय : ज़कातुल-फित्र का बयान)

फ़ित्रा, रोज़ेदार को रमजान के दौरान होने वाले छोटे-मोटे गुनाह और अपशब्द कहने जैसे पाप से मुक्त कराने का साधन है। यह, हर उस मुसलमान पर, जिसके पास उसके और उसके परिवार के ईद के दिन और उसकी रात को खाने भर से अधिक वस्तु हो, स्वयं उसकी तरफ से और जिन लोगों की वह किफ़ालत करता है उनकी तरफ से, प्रति व्यक्ति एक साअ् के हिसाब से, वाजिब है। किसी व्यक्ति पर उसके मज़दूर का फ़ित्रा निकालना अनिवार्य नहीं है। यदि सबकी तरफ से देने की क्षमता न हो, तो पहले अपना फ़ित्रा अदा करेगा और उसके बाद जो जितना अधिक निकटवर्ती हो उसकी ओर से उतना पहले निकालेगा। भ्रूण की तरफ से फित्रा अदा नहीं किया जाएगा। इसपर सबका मतैक्य है। जो स्वेच्छा से किसी मुसलमान के रमज़ान का खर्च वहन करे, उसे उसका फित्रा अदा करना होगा। फित्रा ईद के एक या दो दिन पहले अदा कर देना जायज़ है, लेकिन ईद के बाद अदा करना जायज़ नहीं है। अगर कोई ऐसा करता है, तो वह गुनाहगार होगा, लेकिन उसे ज़काते-फ़ित्र हर हाल में देना पड़ेगा। उसे ईद के दिन, नमाज़ से पहले अदा करना सबसे अच्छा है। फित्रा खजूर, गेहूँ, किशमिश, जौ या पनीर का एक साअ् वाजिब है। यदि इनमें से कोई भी वस्तु न हो, तो उस क्षेत्र में उपलब्ध अन्य खाद्यान्नों से निकालना होगा। इमाम अहमद ने खाद्यान्न को साफ़ करके देने को पसंद किया है और इसे उन्होंने इब्ने सीरीन से नक़ल किया है। एक व्यक्ति का फ़ित्रा एक जमाअत को और एक जमाअत का फ़ित्रा एक व्यक्ति को देना जायज़ है।

(अध्याय : ज़कात निकालने का तरीक़ा)

यदि ससमय अदा करना संभव हो, तो ज़कात को उसके वाजिब होने के समय से विलंब करके अदा करना जायज़ नहीं है। हाँ, यदि इमाम उपस्थित न हो या ज़कात का कोई हक़दार ही मौजूद न हो, तो अलग बात है। इसी तरह ज़कात वसूल करने वाला यदि चाहे, तो अकाल एवं भुखमरी आदि के कारण धन के मालिक से देर से ज़कात वसूल कर सकता है। इमाम अहमद ने इस संबंध में उमर -रज़ियल्लाहु अन्हु- के अमल से दलील ली है।

(अध्याय : ज़कात के हक़दार)

क़ुरआन की आयत में इसके हकदारों की संख्या आठ बताई गई है और उनके अतिरिक्त, किसी और को ज़कात देना जायज़ नहीं है।

पहला और दूसरा : फक़ीर और मिसकीन : याद रहे कि किफ़ायत के बराबर सामान रहते हुए माँगना जायज़ नहीं है। लेकिन पीने का पानी, उधार (मँगनी) और क़र्ज़ माँगना जायज़ है। भूखे को खाना खिलाना, नंगे को वस्त्र पहनाना और क़ैदी को रिहाई दिलाना वाजिब है।

तीसरा : ज़कात की वसूली और वित्रण का काम करने वाले : जैसे वसूल करने वाला, लिखने वाला तथा गिनने और नापने वाला। इमाम के लिए जायज़ नहीं है कि वह ज़कात वसूल करने के काम पर, अपने किसी रिश्तेदार को लगाए। फ़िर, जब वह किसी को भेजे, तो चाहे तो उसके लिए कुछ निर्धारित किए बिना ही उसे भेज दे और अगर चाहे तो कुछ निर्धारित करके भेजे।

चौथा : ऐसे लोग जिनके दिलों को परचाना अभीष्ट हो : इससे अभिप्राय वे लोग हैं, जो अपने क़बीलों में सरदार की हैसियत रखते हों और उनकी बात मानी जाती हो। यदि वे काफ़िरो हों तो उनके इस्लाम ग्रहण कर लेने की आशा हो और यदि मुसलमान हों, तो उनको कुछ देने के बाद इस बात की उम्मीद हो कि उनका ईमान मज़बूत हो जाएगा, या उस तरह के और लोग मुसलमान हो

जाएँगे, या वे शुभाकांक्षी रहेंगे, या फिर उनकी बुराई से बचा जा सकेगा। परंतु किसी मुसलमान के लिए ऐसा माल लेना जायज़ नहीं है, जो उसकी बुराई से बचने के लिए रिश्वत के तौर पर दिया जाए।

पाँचवाँ : ऐसे दास, जिन्होंने अपने मालिकों को एक निर्धारित राशि चुकाने के बाद मुक्ति प्राप्त करने की बात तय कर ली हो। इसी तरह ज़कात के धन से मुस्लिम क़ैदियों को काफ़िरों के हाथों से रिहा कराना भी जायज़ है। क्योंकि यह भी गर्दन छुड़ाने के अंदर दाख़िल है। ज़कात के धन से दास को ख़रीदकर मुक्त भी किया जा सकता है। अल्लाह तआला के फ़रमान { وفي الرقاب} के अर्थ में यह भी शामिल है।

छठा : कर्ज़दार : क़र्ज़दारों के दो प्रकार हैं। एक प्रकार के क़र्ज़दार वे हैं, जिन्होंने किसी फ़ितने को शांत करने और लोगों का झगड़ा समाप्त करने के लिए क़र्ज़ लिया हो। दूसरे प्रकार के क़र्ज़दार वे हैं, जिन्होंने अपने किसी जायज़ काम के लिए क़र्ज़ लिया हो।

सातवाँ : अल्लाह के रास्ते में : इससे मुराद जिहाद करने वाले लोग हैं। ऐसे लोग अगर मालदार हों, तो भी उन्हें उनके जिहाद के खर्च के लिए ज़कात का माल दिया जाएगा। इसी तरह हज्ज भी अल्लाह के रास्ते में शामिल है।

आठवाँ : मुसाफिर : मुराद ऐसा मुसाफ़िर है, जिसका सफर-ख़र्च यात्रा के दौरान ख़त्म हो गया हो और उसके पास अपने गाँव या शहर तक पहुँचने

का साधन न बचा हो। ऐसे व्यक्ति को ज़कात में से इतना दिया जाएगा, जिससे वह अपने घर तक पहुँच जाए, चाहे वह अपने घर में मालदार ही क्यों न हो। यदि ऐसा व्यक्ति निर्धन होने का दावा करे, जिसके धनी होने की बात उसके कहने से पहले मालूम न हो, तो यदि वह हृष्ट-पुष्ट दिखता हो और यह भी पता हो कि उसके पास कमाई है, तो उसे ज़कात देना जायज़ नहीं है। हाँ, यदि उसकी कमाई का पता न चल सके, तो उसे यह बताकर दिया जाएगा कि इसमें मालदार या कमाने वाले ताकतवर आदमी का कोई हिस्सा नहीं है। यदि अजनबी, क़रीबी आदमी से ज़्यादा ज़रूरतमंद हो, तो ऐसा नहीं किया जा सकता कि क़रीबी आदमी को दे दिया जाए और दूर के आदमी को छोड़ दिया जाए। ज़कात का धन अपने किसी रिश्तेदार को अनुचित ढंग से नहीं दिया जा सकता, किसी अनहोनी को टालने के लिए ख़र्च नहीं किया जा सकता, उसके द्वारा किसी की सेवा प्राप्त नहीं की जा सकती और न उसे ख़र्च करके अपने धन की सुरक्षा का बंदोबस्त किया जा सकता। नफ़्ल सदक़ा हमेशा मसनून है और सदक़ा चुपके-से करना अधिक उत्तम है। इसी प्रकार, स्वस्थ होने की स्थिति में देना, खुशी-खुशी देना ज़्यादा अच्छा है। रमज़ान महीने में भी नफ़्ल सदक़ा का विशेष महत्व है, क्योंकि अल्लाह के रसूल - सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ऐसा किया करते थे। इसी तरह ज़रूरत के समय नफ़ल सदक़े का महत्व बढ़ जाता है, क्योंकि अल्लाह तआला का कथन है : {अकाल और भुखमरी के दिन} नफ़्ल सदक़ा, किसी रिश्तेदार को दिया जाए, तो वह सदक़ा भी है और रिश्ते-नाते का ख़्याल रखना भी। विशेष रूप से उस समय, जब रिश्तेदार से दुश्मनी चल रही हो, क्योंकि अल्लाह के

रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- का फरमान है : "तुम उससे संबंध जोड़ो जो तुमसे संबंध तोड़ता है।" फिर पड़ोसी का हक़ है, जैसा कि अल्लाह तआला ने फरमाया है : {और क़रीब और दूर के पड़ोसी पर उपकार करो।} फिर उसका, जो सख़्त मोहताज हो, क्योंकि अल्लाह तआला ने फरमाया है : {अथवा मिट्टी में पड़े निर्धन को।} आदमी इतना सदक़ा नहीं करेगा, जो स्वयं उसके, उसे क़र्ज़ देने वाले या फिर उसके मातहत लोगों के लिए हानिकारक हो। जो व्यक्ति अपना पूरा धन सदक़ा करना चाहे और वह अपने परिवार का ख़र्च अपनी कमाई से चला सकता हो तथा उसे अपने बारे में पूरा यक़ीन हो कि वह अल्लाह पर भरोसे के मामले में डिगेगा नहीं, तो उसके लिए ऐसा करना मुस्तहब है। इसका प्रमाण अबू बक्र सिद्दीक़ -रज़ियल्लाहु अनहु- का क़िस्सा है। लेकिन यदि उसे अपने बारे में इस तरह का यक़ीन न हो, तो पूरा धन सदक़ा करना जायज़ नहीं होगा और उसके ऊपर इस तरह के सदक़े के मामले में पाबंदी लगा दी जाएगी। ऐसा व्यक्ति जो कठिनाई के समय धैर्य रखने की क्षमता न रखता हो, उसके लिए इतना दान करना मकरूह है, जिससे पूर्ण किफ़ायत में कमी आ जाए। याद रहे कि दान करके जतलाना हराम है। यह महा पाप है और दान के पुण्य को खा जाता है। जिसने कोई वस्तु दान करने के उद्देश्य से निकाल ली, लेकिन कोई बात आड़े आ गई, तो मुस्तहब यह है कि वह सदक़ा कर ही डाले। अम्र बिन आस -रज़ियल्लाहु अन्हु- जब किसी माँगने वाले के लिए कुछ अनाज निकाल लेते और फिर उसे नहीं पाते, तो उसे अलग करके रख लेते। आदमी उत्तम वस्तु ही दान करे और जानबूझखर घटिया वस्तु दान न करे। सबसे उत्तम सदक़ा तंगहाल व्यक्ति

का खून-पसीने की कमाई से दिया हुआ सदक़ा है और इस हदीस का उससे कोई टकराव नहीं है : "सबसे उत्तम दान वह है, जो पर्याप्त सामग्री बचाकर रखते हुए किया जाए।" क्योंकि "جهد المقل" से अभिप्राय यह है कि आदमी अपने बाल-बच्चों की ज़रूरत भर का सामान बचाकर रखते हुए सदक़ा करे।

(रोज़े से संबंधित आदेश तथा निर्देश)

रमज़ान का रोज़ा, इस्लाम का एक स्तंभ है। इसे सन् 2 हिजरी में फ़र्ज़ किया गया था। अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने अपने जीवन काल में 9 रमज़ान महीनों के रोज़े रखे। शाबान महीने की तीसवीं रात को चाँद देखना मुस्तहब है। रमज़ान का रोज़ा, उसका चाँद देखकर ही रखना वाजिब है। यदि आकाश साफ़ रहने के बावजूद चाँद नज़र न आए, तो शाबान महीने के तीस दिन पूरे कर ले और फिर रोज़ा रखे। इसमें किसी का कोई मतभेद नहीं है। जब चाँद देखे, तो तीन बार अल्लाहु अकबर (अल्लाह सबसे बड़ा है) कहने के बाद यह दुआ पढ़े :

"اللهم أهله علينا بالأمن والإيمان والسلامة والإسلام والتوفيق لما تحب وترضاه ربي وربك الله هلال خير ورشد "

(ऐ अल्लाह! तू इसे अमन-चैन, ईमान, सुरक्षा, इस्लाम और अपने प्रिय एवं पसंदीदा कामों के सुयोग के साथ हमपर उदय कर। ऐ चाँद! मेरा और तेरा रब अल्लाह है। अल्लाह करे कि तू भलाई और हिदायत का चाँद हो।) चाँद देखने के संबंध में एक विश्वस्त व्यक्ति की बात मान ली जाएगी। यही राय, इमाम तिरमिज़ी ने अधिकांश विद्वानों के हवाले से नक़ल की है। यदि कोई व्यक्ति अकेले चाँद देखे और उसकी गवाही अमान्य घोषित कर दी जाए, तो वह स्वयं

रोज़ा तो रखेगा, लेकिन ईद लोगों के साथ मनाएगा। अल्बत्ता, अगर अकेले शव्वाल महीने का चाँद देखे, तो रोज़ा नहीं छोड़ेगा।

मुसाफिर जब अपने गाँव की आबादी को पार कर ले, तो रोज़ा तोड़ सकता है। लेकिन अधिकतर उलमा के इख़्तिलाफ़ से बचने के लिए उस दिन का रोज़ा रख लेना ही उत्तम है। गर्भवती और दूध पिलाने वाली महिलाओं को यदि अपनी जान का ख़तरा हो या अपने बच्चे की जान का खतरा हो, तो उनके लिए रोज़ा न रखना जायज़ है। लेकिन यदि केवल अपने शिशु की जान का खतरा महसूस हो, तो उन्हें हर रोज़े के बदले में एक मिसकीन को खाना भी खिलाना होगा। जब किसी बीरमार व्यक्ति को रोज़ा रखने से हानि का भय हो, तो उसका रोज़ा रखना मकरूह है। इसका प्रमाण क़ुरआन की एक आयत है। जो व्यक्ति बुढ़ापे या ऐसी बीमारी के कारण, रोज़ा रखने में अक्षम हो, जिसके ठीक होने की आशा न हो, तो वह रोज़ा छोड़ देगा और प्रत्येक दिन के बदले एक मिसकीन को खाना खिलाएगा। यदि बिन चाहे किसी के कंठ में कोई मक्खी घुस जाए या धूल उड़कर उसके कंठ में प्रवेश कर जाए या पानी चला जाए, तो वह रोज़ा नहीं तोड़ेगा।

फ़र्ज़ रोज़ा, रात को नीयत किए बिना सही नहीं होगा। हाँ, नफ़्ल रोज़े की नीयत दिन में, सूरज ढलने से पहले या उसके बाद भी की जा सकती है।

(अध्याय : रोज़े को अमान्य करने वाली चीज़ें)

जिसने कुछ खा लिया, या पी लिया, या नाक में तेल आदि डाला और वह कंठ तक पहुँच गया, या पाखाने के रास्ते से अंदर दवा पहुँचाई, या जान-बूझकर उलटी कर दी, या पछना लगाया अथवा लगवाया, तो उसका रोज़ा अमान्य हो जाएगा। लेकिन अगर इनमें से कोई भी काम भूलवश कर लिया, तो रोज़ा नहीं टूटेगा। यदि सहरी के समय आदमी को फ़ज्र के उदय होने में संदेह हो, तो वह खा और पी सकता है, क्योंकि अल्लाह तआला का फरमान है : {और रात में खाओ और पियो, यहाँ तक कि भोर की सफेद धारी रात की काली धारी से स्पष्ट हो जाए।} जिसने संभोग करके रोज़ा तोड़ दिया, उसपर उसकी क़ज़ा (बाद में पूरा करने) के साथ ज़िहार का कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) भी अनिवार्य है। जिस व्यक्ति की कामेच्छा उत्तेजित हो जाती है, उसके लिए रोज़े की हालत में अपनी पत्नी का चुंबन लेना मकरूह है। वैसे तो झूठ बोलना, चुग़ली खाना, गाली बकना, लड़ाई-झगड़ा करना और पीठ पीछे दूसरे की बुराई करना आदि कार्य सर्वदा और सर्वथा हराम हैं, किंतु रोज़ेदार के लिए इन सब बुराइयों से परहेज़ करना और ज़्यादा ताकीदी तौर पर वाजिब है। रोज़ेदार के लिए हर नापसंदीदा बात से परहेज़ करना भी सुन्नत है। अगर कोई उसे गाली दे, तो उससे कह देना चाहिए कि मैं रोज़े से हूँ। जब सूरज के डूबने का यक़ीन हो जाए, तो रोज़ा खोलने में जल्दी करना सुन्नत है और अगर दृढ़ गुमान हो कि सूरज डूब गया है तो भी रोज़ा खोला जा सकता है। सहरी करने में उस समय तक देरी करना सुन्नत है, जब तक फ़ज्र निकल जाने का भय न हो। थोड़ा-बहुत खा-पी लेने से भी सहरी की नेकी प्राप्त हो

जाएगी। इफ़तार, ताज़ा खजूर से करना चाहिए, अगर ताज़ा खजूर न मिल सके, तो सूखी खजूर से करना चाहिए और अगर सूखी खजूर भी न मिल सके, तो पानी से करना चाहिए। रोज़ा खोलते समय दुआ भी करनी चाहिए। जो किसी रोज़ेदार को इफ़तार कराएगा, उसे रोज़ेदार के बराबर ही नेकी प्राप्त होगी। रमज़ान में ज़्यादा से ज़्यादा क़ुरआन पाठ करना, अल्लाह तआला का ज़िक्र करना और दान करना मुस्तहब है। नफ़्ल रोज़ा रखने का सबसे उत्तम तरीक़ा यह है कि आदमी एक दिन रोज़ा रखे और एक दिन बिना रोज़े के रहे। हर महीना, तीन रोज़े रखना सुन्नत है और इसका उत्तम तरीक़ा यह है कि हर महीने की तेरहवीं, चौदहवीं और पंद्रहवीं तारीखों को रोज़ा रख लिया जाए। इसी तरह, सुन्नत यह है कि हर गुरूवार एवं सोमवार को रोज़ा रखा जाए, शव्वाल महीने के छः रोज़े रखे जाएँ, चाहे बीच-बीच में अंतराल के साथ ही क्यों न हो, ज़ुल-हिज्जा महीने के शुरू से नौ रोज़े रखे जाएँ, जिनमें सबसे महत्वपूर्ण रोज़ा नौवें दिन यानी अरफ़ा के दिन का रोज़ा है।

इसी तरह, मुहर्रम महीने के रोज़े के भी सुन्नत हैं और खासकर उसकी नौवीं और दसवीं तारीखों के रोज़ों का अधिक महत्व है और दोनों दिन रोज़े से रहना सुन्नत है। याद रहे कि दसवीं मुहर्रम को रोज़े के अतिरिक्त जितने भी कार्य बयान किए जाते हैं, उनकी कोई असल नहीं है और वे सारे के सारे बिदअत हैं। रजब के महीने को रोज़े के लिए खास कर लेना बिदअत है और इस महीने में रोज़ा रखने और नमाज़ पढ़ने से संबंधित जितनी भी हदीसें आती हैं, वे सब की सब झूठी हैं। विशेष रूप से जुमे के दिन रोज़ा रखना मकरूह है, रमज़ान के एक या दो दिन पहले से रोज़ा रखना मकरूह है और रात में कुछ

खाए-पिए बिना लगातार रोज़ा रखते चले जाना भी मकरूह है। दोनों ईदों के दिनों और तशरीक़ के दिनों (क़ुरबानी के बाद के तीन दिनों) में रोज़ा रखना हराम है। बिना नागा किए हमेशा रोज़ा रखना भी मकरूह है। लैलतुल क़द्र एक बड़ी महत्वपूर्ण रात है, जिसमें दुआ क़बूल होने की आशा रहती है। अल्लाह तआला का फ़रमान है : {लैलतुल क़द्र (सम्मानित रात्रि) हज़ार महीनों से उत्तम है।} क़ुरआन के व्याख्याकार कहते हैं : उस रात को जागना और इबादत करना, दूसरे हज़ार महीनों में जागकर इबादत करने से ज़्यादा उत्तम है। इसे सम्मानित रात कहने का कारण यह है कि उसी रात, साल भर होने वाली घटनाओं का निर्णय लिया जाता है। सम्मानित रात, रमज़ान के अंतिम दस दिनों और विषम रातों के साथ खास है और उनके अंदर भी सत्ताइसवीं रात सबसे ज़्यादा संभावित है। उस रात वही दुआ करनी चाहिए, जो अल्लाह के नबी -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने आयशा -रज़ियल्लाहु अन्हा- को सिखाई थी, जो इस प्रकार है : (ऐ अल्लाह! निश्चय तू क्षमा करने वाला दयालु है, तुझे क्षमा करना पसंद है। अतः मुझे क्षमा कर दे।) इतना हमने लिखा और अल्लाह ही सबसे ज़्यादा और बेहतर जानता है। आप -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- और आपके परिजनों एवं सभी सहाबा पर अल्लाह की दया और शांति हो।

(नमाज़ के विधि-विधान)

लेखक - शैख़ुल इस्लाम मुहम्मद बिन अब्दुल वह्हाब रहिमहुल्लाह

अल्लाह के नाम से (शुरू करता हूँ), जो बड़ा दयालु एवं अति कृपाशील है।

(नमाज़ की शर्तें नौ हैं)

इस्लाम, बुद्धि-विवेक, सही-गलत में अंतर करने की क्षमता, पाक होना, गुप्तांगों को छुपाना, गंदगी से बचना, समय के दाखिल होने का ज्ञान, क़िबले की ओर मुँह करना और नीयत एवं इरादा करना।

(नमाज़ के स्तंभ चौदह हैं)

क्षमता होने पर खड़ा होना, एहराम की तकबीर (पहली तकबीर) कहना, सूरत फ़ातिहा पढ़ना, रुकू करना, उससे उठना, संतुलित होना, सजदा करना, उससे उठना, दोनों सजदों के दरमियान बैठना, सभी कृत्यों को इतमीनान के साथ अदा करना, तरतीब का ख़याल रखना, अंतिम तशह्हुद पढ़ना, उसके लिए बैठना और पहला सलाम फेरना।

(नमाज़ को बातिल करने वाली चीज़ें आठ हैं)

नमाज़ में जान-बूझकर बात करना, हँसना, खाना, पीना, गुप्तांग का खुल जाना, क़िबले से फिर जाना, नमाज़ से असंबंद्ध बहुत अधिक कार्य करना, और तहारत का अंत होना।।

(नमाज़ की वाजिब चीज़ें, आठ हैं)

इहराम की तकबीर (प्रथम तकबीर) के अलावा दूसरी तकबीरें, इमाम और अकेले नमाज़ पढ़ने वाले का "سمع الله لمن حمده" कहना, " ربنا ولك الحمد" कहना, रुकू की तसबीहें, सजदे की तसबीहें, दोनों सजदों के दरमियान "رب اغفر لي" कहना जिसे एक बार कहना अनिवार्य है, पहला तशह्हुद कयोंकि अल्लाह के रसूल -सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम- ने ऐसा सर्वदा किया है और उसके करने का आदेश भी दिया है तथा उसे भूल जाने की अवस्था में सजदा-ए-सह्व भी किया है, और आठवां वाजिब इस पहले तशह्हुद के लिए बैठना है।

(वुज़ू के फ़राइज़ छह हैं)

चेहरे को धोना, दोनों हाथों को कोहनियों तक धोना, पूरे सिर का मसह करना, दोनों पैरों को टखनों तक धोना, तरतीब का ख़याल रखना और इन सारे कार्यों को लगातार करना।

(वज़ू की शर्तें पाँच हैं)

पाक पानी, आदमी का मुसलमान होना, बुद्धि-विवेक वाला होना, कोई रुकावट न होना, चमड़े तक पानी का पहुँचना और हमेशा बेवज़ू रहने वाले व्यक्ति के लिए समय का दाख़िल होना।

(वज़ू को तोड़ने वाले चीज़ें आठ हैं)

दोनों रास्तों (गुप्तांगों) से निकलने वाली वस्तु, शरीर से अधिक मात्रा में निकलने वाली वस्तु, नींद आदि के कारण निश्चेत हो जाना, कामेच्छा के साथ औरत को छूना, आदमी के दोनों गुप्तांगों को छूना, मृतक को स्नान देना, ऊँट का माँस खाना और इस्लाम धर्म को परित्याग करना, अल्लाह तआला हमें इससे सुरक्षित रखे। और अल्लाह तआला ही सबसे बेहतर जानता है।

विषय सूची

(नमाज़ के लिए जाने के आदाब) 2
(अध्याय: नमाज़ के लिए जाने के आदाब) 4
(अध्याय: नमाज़ का तरीक़ा) 8
(अध्याय: नफ़्ल नमाज़ का बयान).. 38
(अध्याय: जमाअत की नमाज़ का बयान) 54
(अध्याय: उज़्र वाले लोगों की नमाज़ का बयान)................................ 64
(अध्याय: जुमे की नमाज़ का बयान).. 68
(अध्याय: दोनों ईदों की नमाज़ का बयान)...................................... 71
(अध्याय: सूर्य ग्रहण की नमाज़ का बयान) 72
(अध्याय : इस्तिसक़ा -बारिश माँगने- की नमाज़ का बयान) 73
(अध्याय: जनाज़ों का बयान).. 78
(ज़कात से संबंधित आदेश एवं निर्देश).. 88
(अध्याय: जानवरों की ज़कात का बयान)...................................... 90
(अध्याय: ज़मीन के पैदावार की ज़कात) 92

(अध्याय: सोने-चाँदी की ज़कात) 94

(अध्याय: व्यावसायिक सामान की ज़कात) 95

(अध्याय: ज़कात-ए-फित्र का बयान) 96

(अध्याय: ज़कात निकालने का तरीक़ा) 97

(अध्याय: ज़कात के हकदार) 98

(रोज़े से संबंधित आदेश तथा निर्देश).. 103

(अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें).. 105

(नमाज़ के विधि-विधान) 108

विषय सूची 111